तृतीय अध्याय

"क्रांतिवीर तात्या टोपे" उपन्यास में ऐतिहासिकता

तृतीय अध्याय

:: " क्रान्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में ऐतिहासिकता ::

(A) उपन्यास से लाभ :-

उपन्यास मनोरंजन के साथ साथ ज्ञान भी प्रदान करता है। वह मनुष्य के अन्दर और बाहर की सभी प्रवृत्तियों को दिखाकर उनका स्पष्टीकरण करता है, साथ ही जीवन को प्रेरणा देता है। व्यक्ति और समाज का अध्ययन करने के साथ साथ मनुष्य को समग्र रूप में समझकर उसके जीवन के सात्त्विक लक्ष्यों को प्रकट करना भी उपन्यास का ध्येय है।

आज तक विज्ञान व्दारा प्राप्त तथ्यों के परे जो सत्य है, उसकी ओर मनुष्य को अग्रसर करना उपन्यास का कर्तव्य है। अत: जीवन को चिरन्तन गति से उन्नत स्तर के सत्य की खोज में आगे बढना होता है। इस प्रगति में उसको सभी शास्त्र, विज्ञान आदि सहयोग देते हैं। उपन्यास इस प्रगति को व्यक्त कर सकता है, और उसकी दिशा सूचक बन सकता है। वह भूत का स्पष्टीकरण और वर्तमान का विश्लेषण करते हुए भविष्य के निर्माण में मनुष्य के साथ चल सकता है। वास्तविक जीवन में तो उपन्यास का महत्त्व सबसे बढकर है।

(B) उपन्यास की परिभाषा :-

" विचारक उपन्यास का शाब्दार्थ यह मानते हैं - उप = निकट, न्यास = रखना। "[1] अर्थात उपन्यास का शाब्दिक अर्थ है सामने रखना। जीवन को सामने रखना उपन्यास का कार्य होता है।

उपन्यास का अर्थ देते हुए उमेश शास्त्री लिखते हैं, " सम्भवत , उपन्यासों में प्रसन्नता एंवं आल्हाद उत्पन्न करने की शक्ति एवं अर्थ को युक्तियुक्त रूप में उपस्थित करने की प्रवृत्ति के कारण इस प्रकार की कथात्मक रचनाओं को "उपन्यास" नाम से अभिहित किया जाता है। " [2]

उपन्यास शब्द का अभिप्राय देते हुए दुर्गा शंकर मिश्र लिखते हैं, "सामान्यत: संस्कृत साहित्य में उपन्यास शब्द का प्रयोग आजकल के उपन्यास के अर्थ में नही होता था, बल्कि संस्कृत लक्ष्यग्रंथों में तो इस शब्द का प्रयोग नाटक की संधियों

के उपभेद के लिए हुआ है। इस प्रकार उपन्यास की मुख्यतया दो प्रकार से व्याख्या की गई है - पहली व्याख्या है - " उपन्यास! प्रसादनम् " अर्थात उपन्यास का मूल ध्येय पाठकों को प्रसन्न करना है। दूसरी व्याख्या के अनुसार " उपपत्तिकृ-तोहार्थ उपन्यास : संकीर्तित : " अर्थात किसी अर्थ को व्युक्ति-युक्त रूप में उपस्थित करना उपन्यास कहलाता है। "[३]

उपन्यास अंग्रेजी पर्यायवाची शब्द 'नॉविल " का रूप है जिसका तात्पर्य, "न्यू " अर्थात नवीन है। इसका विकास लॉटिन शब्द " नॉविस " से हुआ है। आज के अर्थ में प्रयुक्त हिन्दी शब्द, " उपन्यास " प्राचीन नहीं है। अंग्रेजी उपन्यासकारों की दृष्टि में - उपन्यास सामान्य और प्रत्यक्ष जीवन के कथानक, जहाँ अनहोनी या बुध्दि से परे कुछ भी नहीं, जीवन का सहज चित्रण जो आश्चर्य और विस्मय नहीं, सुख और प्रसन्नता देता हैं। जो हमारे जीवन का अंग है, हमारी या हमारे जैसी की ही कथा है।[४]

उपन्यास के स्वरूप विश्लेषण का प्रयास अनेक विव्दानोंने किया है। विस्तार भय से बचने के लिए हमने उसका विवेचन नहीं दिया है, हमारे विवेचन विषय के लिए भी इसकी उपयोगिता नहीं है। अत: हमने केवळ संकेत दिया है।

(C) उपन्यास की विकास यात्रा :-

हिन्दी साहित्य में सबसे पहले उपन्यास के बारेमें बताते हुए उमेश शास्त्रीने " लाला श्रीनिवासदास की कृति परीक्षा - गुरु को हिन्दी साहित्य का प्रथम उपन्यास कहा। "[४]

आधुनिक-युग में उपन्यास - साहित्य का सृजन व्यापक स्तर पर हुआ है। भारतेन्दु युग से लेकर आज तक के उपन्यास साहित्य के इतिहास को उमेश शास्त्री ने इस प्रकार दिया है - "

[१] भारतेन्दु युग के उपन्यास।
[२] व्दिवेदी युग के उपन्यास।
[३] प्रेमचन्द युग के उपन्यास।
[४] स्वांतत्र्योत्तर युग के उपन्यास।
[५] वर्तमान [सातवे दशक के] उपन्यास।
[६] आठवे दशक के उपन्यास।

(D) उपन्यास का वर्गीकरण :-

उपन्यास-साहित्य की प्रवृत्ति एवं चिन्तन के आधार पर किया गया वर्गीकरण इस प्रकार है -

१] सामाजिक उपन्यास

२] ऐतिहासिक उपन्यास

३] कुतूहलपूर्ण उपन्यास

४] आँचलिक उपन्यास

५] प्रयोगवादी उपन्यास "५

हमारे अध्ययन का विषय ऐतिहासिक उपन्यास होने के कारण हम यहाँपर उपन्यास और इतिहास में क्या इंतर है इसे देखेंगे और ऐतिहासिकता के मानदण्डों को निश्चित कर आलोच्य उपन्यास को परखेंगे -

(E) इतिहास और उपन्यास में अंतर :-

अनेक विचारोंको का कहना है कि इतिहास में सब कुछ यथार्थ होते हुए भी यह असत्य है और कथा साहित्य में सब कुछ काल्पनिक होते हुए भी वह सत्य है। दुर्गा शंगर मिश्र जी ने " साहित्यिक निबन्ध " में उपन्यास और इतिहास का सम्बधं स्पष्ट करते हुए लिखा है," दोनों में मानवीय चरित्रों और उनकी विविध श्रेत्रीय चेष्टाओं का अंकन होता है। एक उपन्यासकार चाहे इतिहास से अपने पात्रों का चयन करें, चाहे युगीन समाज से, दोनों ही दशाओं में उसे उनको समुचित स्थ देने के लिए कल्पना का आश्रय ग्रहण करना होगा। इतिहास से लिए गए पात्रों में ऐतिहासिक तत्व उतने ही यथार्थश में मिश्रित होता है, जितना समाज से लिए गए पात्रों में सामाजिक तत्व, अन्यथा शेष जो भाग दोनों में बचते हैं, वह कल्पनाजन्य होता है। वास्तव में वही भाग उपन्यास और इतिहास में न केवल पारस्पारिक भेद उत्पन्न करता है, वरन उपन्यास को इतिहास बनने से बचाता भी है। "६

इतिहास और उपन्यास का पारस्पारिक सम्बंध देखकर भले ही दोनों में कुछ समानता का आभास होता हो, पर न तो इतिहरा ग्रंथ उपन्यास कहे जा सकते हैं, और न ही उपन्यास शुध्द इतिहास के कोटि में रखे जा सकते है। यहाँ यह स्मरणीय है कि, उपन्यास को साहित्य या कला की कोटि में रखा जाता है,

जबकि इतिहास अधिकांशत: शास्त्र ही है। इस प्रकार यहाँ ऐतिहासिक उपन्यास का स्वरूप विवेचन करने से पूर्व इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यास की विभिन्नता पर प्रकाश डालना आवश्यक हो जाता है।

(३) इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यास :-

सामान्यतया इतिहास का अर्थ है " इति-ह-आस " अर्थात यह ऐसा हुआ और वह घटना का यथार्थ वर्णन करता है, जब कि उपन्यास कल्पना का रोचक रम्य विकास है। विचारक बैजहॉट की परिभाषा को मानते हुए दुर्गा शंकर मिश्र लिखते हैं,- " ऐतिहासिक उपन्यास और इतिहास की तुलना बहते हुए जलप्रवाह में पडी हुई प्राचीन दुर्ग मीनार की छाया से की है। उनका कहना है कि पानी नया है और नित्य परिवर्तनशील है, पर मीनार पुरानी है और अपने स्थान पर स्थित है। यही समस्या ऐतिहासिक उपन्यासकार की भी है कि उसके चरण तो धरती पर हैं, पर वह स्वप्न प्राचीन देख रहा है। " ७

यद्यपि इतिहासकार और ऐतिहासिक उपन्यासकार प्राय: अतीत का ही वर्णन करते हैं और उनकी विचारधारा प्रचलित तथ्यों पर ही आधारित रहती है, पर दोनों के दृष्टिकोण में विभिन्नता सी है। सामरन्यतया इतिहासकार तथ्यों और उनके कारणों को दृष्टि में रखकर अनुमान या तर्क व्दारा उन्हें शृंखलाबध्द करता है तथा तथ्यों व कारणों के आधार पर संम्बंधित विस्तृत घटनाओं का अनुमान लगाता है, लेकिन कल्पना और व्याख्या का कार्य उसके क्षेत्र में नहीं है। वह तो केवल अनुसंधान कर परिस्थिति और घटना का चित्रण मात्र करता है, उनका निर्माण नहीं। इस प्रकार उसके लिए बाहय घटनाएँ ही मुख्य हैं और वह व्यक्ति की अपेक्षा राष्ट्र को ही प्रमुखता प्रदान करता है तथा अंतरिक भावनाओं के वर्णन से स्वयं को यथासम्भव बचाने का प्रयत्न करता है।

इसके विपरीत ऐतिहासिक उपन्यासकार तथ्यों का आधार ग्रहण करते हुए भी कल्पना और व्याख्या का प्रयोग स्वतंत्र रूप से करने के लिए स्वतंत्र है तथा वह वैज्ञानिक की^परिस्थितियाँ उत्पन्न कर उन्हे सामाजिक दृष्टि से उपयुक्त बनाता है वह जीवन के अधिक समीप जान पडता है और वह मानव जीवन के अनावश्यक व्यक्त को तजकर उल्लेखनीय अव्यक्त को व्यक्त करता है, पर इतिहासकार व्यक्त का केवल वही अंश ग्रहण करता है, जो राष्ट्र व जमीन के उत्थान से सम्बंधित है।

यहाँ यह ध्यान रखना है कि कल्पना के विशाल क्षेत्र में स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करते समय ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहास के प्रति उदासीन नहीं रह सकता है और उसकी कुशलता तो इसी बात में है कि वह दोनों मुख्य तत्वों इतिहास और उपन्यास को ऐसे धुलेमिले रूप में प्रस्तुत करें, जैसे दूध और शक्कर।

सामान्यतया इतिहासकार का लक्ष्य पाठकों का मनोरंजन कराना न होकर केवल तथ्यों का क्रमिक लेखा- जोखा मात्र प्रस्तुत कर देना होता है, पर ऐतिहासिक उपन्यासकार सोद्देश्य मनोरंजन को अधिक महत्व देता हुआ अपने उपन्यास की रचना करता है, अत: वह इतिहास से तथ्यों का संचय कर अपनी कल्पना व्दारा उन्हें अधिक आकर्षक, मनोरंजक व प्रभावोत्पादक रूप में अंकित करता है। इतना अवश्य है कि उसकी यह देन तथ्यों को ठेस न पहुँचाते और तर्कयुक्त अर्थपूर्ण तथा अनुपातिक प्रतीत होती है। इस प्रकार इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यास परस्पर सम्बंधित होते हुए भी बहुत कुछ विभिन्नता भी रखते हैं।

(G) ऐतिहासिक उपन्यास की विशेषताएँ एवं परिभाषा :-

[१] विषयवस्तु का आधार इतिहास -

इतिहास का शाब्दिक अर्थ बताते हुए रामनारायण सिंह ने लिखा है,- " इतिहास का अर्थ है - " ऐसा ही था " या ऐसी हा हुआ। " इसका अभिप्राय यह हुआ कि इतिहास में घटनाओंका यथार्थ वर्णन होता है। इस दृष्टि से अतीत के किसी भी वास्तविक विवरण को इतिहास की संज्ञा दी जा सकती है।

ऐतिहासिक उपन्यासों की विषय-वस्तु इतिहास पर आधारित होती है। इसमें ऐतिहासिक कथा रचना के लिए यह आवश्यक है, कि उपन्यासकार इतिहास के जिस युग से कथा के सूत्र ले रहा हो, उस युग को पृष्ठभूमि और वातावरण का भली प्रकार अध्ययन करें ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास तथा वर्तमान का तथा यथार्थ और कल्पना का संतुलित समन्वय होना चाहिए और ऐतिहासिक विकास के किसी भी युग से कथा का चयन क्यों न किया गया हो उस युग की पृष्ठभूमि और विवरण कथा के निर्वाह एवं विकास के लिए आवश्यक होता है।

[२] युगीन पृष्ठभूमि और वातावरण का चित्रण -

हिन्दी के उपन्यास के क्षेत्र में ऐतिहासिक कथा की जो प्रवृत्ति मिलती है,

उसका आरम्भ तो भारतेन्दु युग में ही हो चुका था, परन्तु आधुनिक युग में अनेक उपन्यासकारों ने श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासों की रचनाकर इस विधा के महत्त्व को सिद्ध किया है।

ऐतिहासिक उपन्यासकार को वर्णित देशकाल के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग करना पडता है, पर हमारे कहने का अभिप्राय यह नहीं है की उपन्यासकार उसी युग की भाषा का प्रयोग करें। किन्तु उपन्यास की कथा जिस युग की है उसी युग की पृष्ठभूमि को अपनाना अनिवार्य है। ऐतिहासिक उपन्यासकार को त्यौहारों और रीति-रिवाजों आदि का वर्णन करते समय भी ऐतिहासिकता की पूर्ण रक्षा करनी चाहिए। और वह अपनी कृतियों में ऐसी बातों का उल्लेख न करें जो देशकाल के विरुध्द हों। ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पनाका होना आवश्यक है, ऐसा अगर नहीं है तो इतिहास से जैसे का तैसा लेना याने पूरी यथार्थता है तो वह उपन्यास, उपन्यास न रहकर वह केवल इतिहास माना जायेगा।

युग के साथ - साथ युग के वातावरण को भी अधिक महत्त्व है। वातावरण की यथार्थता पात्रों को पूर्णतया उजागर कर दे और पात्र वातावरण के अनुकुल रहते हुए उसके योग से उद्‌घाटित -विकसित होते रहें। पात्र और परिस्थितियों की यह समन्विति स्वयं ही तत्कालीन समाज प्रवाह के वेगको व्यक्त कर देगी। पात्रों के साथ - साथ जिस काल की कथापर उपन्यास लिखा जा रहा है, उसी देश-काल तथा वातावरण प्रस्तुत करना ही ऐतिहासिक उपन्यास की सफलता और अनिवार्यता है।

[3] इतिहास और वर्तमान का सम्बंध -

उपन्यास और इतिहास के परस्पर सम्बंध का प्रश्न उपन्यास के इतिहास पर आधारित प्रकार विशेष - अर्थात ऐतिहासिक उपन्यास की दृष्टि से उठता है। इतिहास की परिभाषा देते हुए सत्यपाल गुप्त लिखते हैं, " वस्तुत: इतिहास-कार और इतिहास के तथ्य एक दूसरे के लिए आवश्यक हैं। इतिहास बिना ऐतिहासिक तथ्यों के निर्मूल तथा विस्तार है और तथ्य बिना इतिहासकार के मृत तथा निरर्थक। "[९]

वर्तमान युग में इतिहास को कुछ विद्‌वान विज्ञान तो कुछ विद्‌वान कला मानते हैं। इतिहास पूर्णतया विज्ञान नहीं है, और न तो मात्र घटनाओंका

संगुम्फन तथा महान पुरुषों की गाथा है। बल्कि वह मानवीय सत्यों की खोज है, जिसका सम्बंध मनुष्य के विगत सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक जीवन से स्थापित किया जाता है। जिसका संकेत हमें यहाँपर मिलता है, " इतिहास और उपन्यास के सम्बन्धों का प्रश्न हमारा ध्यान उस इतिहास विषयक तात्त्विक वाद-विवाद की ओर ले जाता है जिसके अनुसार इतिहास दर्शन के कुछ विद्वान इतिहास को विज्ञान के अन्तर्गत रखते हैं और कुछ उसे कला के। पहला है " पाजिटिविस्ट " वर्ग तथा दूसरा है " आइडियालिस्ट " वर्ग। " १०

[४] यथार्थ और कल्पना का समन्वय -

ऐतिहासिक उपन्यासों का आख्यान इतिहास की पृष्ठभूमि पर से लिया जाता है और इनकी सबसे बडी विशेषता देशकाल चित्रण है। देशकाल के चित्रण से अभिप्राय यह है कि जिस देश अथवा स्थान का और इतिहास के जिस काल खंड का वर्णन हो, वह उचित, यथार्थ और ठीक होना चाहिए अर्थात ऐतिहासिक सत्य की सुरक्षा पर पूर्ण ध्यान दिया जाय। इस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यासकार को वर्णित युग और स्थल विशेष की संस्कृति, सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक आदि परिस्थितियों, रहन-सहन और रीतिरिवाजों का ज्ञान अवश्य होना चाहिए तथा उसमें अपूर्व कल्पना शक्ति भी आवश्यक है। क्योंकि वह इतिहासज्ञों, पुरातत्त्ववेत्ताओं आदि के व्दारा संगृहित नीरस तथ्यों को कल्पना व्दारा सजीव और सुन्दर बना देता है। हिन्दी साहित्य में श्री वृन्दावनलाल वर्मा को ऐतिहासिक उपन्यास लिखने में विशेष रूप से प्रसिध्दि प्राप्त हुई है कचनार, झाँसी की रानी मृगनयनी आदि उनके ऐतिहासिक उपन्यास है।

एक ओर इतिहास का आधार है भौतिक सत्यहैतो उपन्यास का आधार है कल्पना। साधारणतया दोनों में बहुत अंतर दिखाई पडता है। किन्तु इस अन्तर को ऐतिहासिक उपन्यासकार कम करके मेल स्थापित करता है। ऐतिहासिक उपन्यासकार को अन्य उपन्यासकारों की अपेक्षा अत्याधिक सतर्क रहना पडता है।

[५] ऐतिहासिक पात्रों का चित्रण: चरित्र चित्रण में यथार्थ और कल्पना का समन्वय -

ऐतिहासिक उपन्यास में पात्र-योजना कथानक की आवश्यकतानुसार ही की जाती है, पर पात्र - योजना चाहे जिस प्रकार की हो, पात्रों का चयन जीवन के

यथार्थ से ही होना चाहिए। यदि औपन्यासिक पात्र पाठकों की यथार्थ कल्पना से दूर, अलौकिक और अयथार्थ बन जाते है, तब केवल उनकी सजीवता संदिग्ध प्रतीत होती है, अपितु उपन्यास की सफलता भी निश्चित नहीं रह पाती।

ऐतिहासिक उपन्यासों के चरित्र - चित्रण का सम्बंध मुख्य पात्रों का इतिहास सिध्द होना आवश्यक है। उन पात्रों के कार्य कलाप का भी अधिकांश भाग ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिक होना चाहिए। चरित्रों के सम्बंध में यथार्थता और कल्पनात्मकता का प्रश्न गंभीर रूप से विचारणीय हो जाता है। ऐतिहासिक उपन्यास में लेखक किसी पात्र को इतिहास में मिलनेवाले सामान्य विवरण के आधारपर प्रस्तुत करता रहता है। इसी कारण लेखक जैसा भी स्वरूप प्रस्तुत करता है, हम उसे यथार्थ मान लेते हैं।

[६] ऐतिहासिक उपन्यास का सम्बंध अतीत की घटना, पात्रों प्रसंगों से होता है -

ऐतिहासिक उपन्यास लिखते समय उपन्यासकार को पात्रों, तिथियों तथा परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए। ऐतिहासिक उपन्यास का सम्बंध बीते हुए किसी काल की घटनाओं, चरित्रों और वातावरण से रहता है। डॉ. शशि-भूषण सिंहल उपन्यास की परिभाषा इसप्रकार देते हैं, - " उपन्यासकार देखे - सुने जीवन को अपनी व्यक्तित्व क्षमता के अनुसार समझाता है। उसकी जीवन सम्बन्धी यह समझ या धारणा, उसकी रचना की मूल दृष्टि है। यह दृष्टि उपन्यास का कथ्य है, और कथ्य को " जीवन चित्र " में परिणत करने की विधि उपन्यास का शिल्प है। उपन्यास के जीवन में पात्र अपने मूल स्वभाव के अनुसार गतिशील रहते हैं और उस गतिविधि के परिणाम-स्वरूप उनके जगत में जो परिस्थिति- सूत्र विकसित होता है, वह कथा है। अत: उपन्यास का आकार कथा है, गति पात्र है और उसकी आत्मा कथ्य है। उपन्यासकार की सफलता, उसकी जीवन-विषयक परिपक्व दृष्टि और उस दृष्टि को मानव - चरित्र तथा परिस्थिति-व्यंग्य में साक्षात करने की समुचित सामर्थ्य में निहित है। उपन्यास के मूल तीन अंगों कथ्य, पात्र और कथा - को दृष्टि में रखते हुए उसकी परिभाषा बनती है कि उपन्यास अनुभूत जीवन का पात्र कथा - युक्त गद्यात्मक विशद चित्र है।"[११]

ऐतिहासिक उपन्यास के अंतर्गत प्रधानपात्र, घटना, वातावरण, तिथि यें सभी बाते सत्य होनी चाहिए। यदि इतिहास के पात्र, घटना ऐतिहासिक नहीं

होते तो किस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास सत्य से ओत - प्रोत होगा ? इतिहास घटनाओं की एक सामान्य चर्चा मात्र करता है, लेकिन उपन्यासकार मानव के युगीन जीवन के कंकाल को जीवन प्रदान करता है। जिसके व्दारा मानव की महानता और उसके जीवन का अभिशाप्त पक्ष दोनों मुखर हो उठते हैं। इतिहास में ऐतिहासिक व्यक्ति की सामान्य चर्चा होती है। इतिहास को विकृत करने का उपन्यासकार को अधिकार नहीं होता इतिहास घटनाओं का चौखटा मात्र है। ऐतिहासिक व्यक्ति के शील के अनुसार कल्पना के व्दारा रंग भरके चित्र खींचा जाय तो इतिहास है। सामान्यशील के आधार पर ऐतिहासिक पात्रों की अपनी कल्पना से पुन: निर्माण करता है वही सच्चा ऐतिहासिक उपन्यासकार है।

[७] <u>ऐतिहासिक पात्रों, घटनाओं, तिथियों को आधार बनाया जाता है</u> -

" आधुनिक काल में सन १८५७ ई. की क्रान्ति तथा सन १९४६ ई. के साम्प्रदायिक दंगे को लेकर भी बहुत से उपन्यासकारों ने ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं क्योंकि ये दोनों ही घटनाएँ दिल दहला देने वाली रोमांचकारी एवं मस्तिष्क पर प्रभाव डालने वाली हैं।[१२] " ऐसा डॉ. रामनारायणसिंह " मधुर " कहते हैं। सन् १८५७ ई. की प्रसिध्द भारतीय क्रान्ति के [illegible] वीर पुत्रों को लेकर अनेक ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं।

अँग्रेजी साम्राज्य की स्थापना या आधुनिक युग के आरम्भ के प्रस्तुत युग में ऐतिहासिक उपन्यासकारों के लिए सन् १८५७ ई. की क्रान्ति विशेष महत्त्वपूर्ण घटना रही है। कुछ पात्र प्रसंग इस घटना की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करने के उपकरण रहे हैं और कुछ इसके सीधे भागीदार बनकर गौरव के अधिकारी बन गए हैं।

सुप्रसिध्द ऐतिहासिक उपन्यासकारों ने सन १८५७ ई. की क्रान्ति तथा पात्रों को लेकर उपन्यास लिखे हैं जिसमें वृन्दावनलाल वर्माजी ने " झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई- [लक्ष्मीबाई] , ओमप्रकाश शर्माजी का " साँझ का सूरज "- [बहादुरशाह] शांतिनारायण का " महारानी झाँसी " [लक्ष्मीबाई] , अमृतलाल नागर का " शतरंज के मोहरे" - [सन ५७ ई. की क्रांति की पूर्वपीठिका], प्रतापनारायण श्रीवास्तव का " बेकसी का मजार " - [बहादुरशाह], गोविंदसिंह का " अठारह सौ सत्तावन " - [सत्तावनी क्रान्ति], हिमांशु श्रीवास्तव का " नानाराव पेशवा " - [नाना का जीवन], आनंदसागर का " बिठुर के नाना " - [नानाराव, तात्या टोपे, अजीमुल्ला, टीकासिंह, भवानीसिंह,

अजीजन], रामकुमार भ्रमर का " फौलाद का आदमी " - [अजीमुल्ला], प्रतापनारायण श्रीवास्तव का " विहान " - [कानपुर केन्द्र , नानाराव पेशवा, अजीजन] आदि अनेक ऐतिहासिक उपन्यासों में सन् १८५७ ई. की क्रान्ति तथा तत्कालीन वीरों के जीवन की कहानी उपन्यासों की विषय वस्तु रही है।

सन् १८५७ ई. की महाक्रान्ति आधुनिक भारत के इतिहास की प्रमुख घटना है। इस घटनापर आधारित लिखे गए अनेक उपन्यासों की सूची उपयुक्त विवेचनमें देने का मैंने विनम्र प्रयास किया है।

(ग) युगीन पृष्ठभूमि :-

" क्रान्तिवीर तात्या टोपे " ऐतिहासिक उपन्यास की विशेषताएँ देखने से पहले युगीन परिवेश का विवेचन कर युगीन परिवेश के अंतर्गत सन १८५७ ई. के स्वाधीनता संग्राम के लिए प्रेरक बने कारणों का विवेचन करने का प्रयास किया गया है।

[१] अंग्रेजी राज्य स्थापना की पृष्ठभूमि -

व्यापार के हेतु भारत में आये अंग्रेजोंने यहाँ की परिस्थिति का अनुचित लाभ उठाते हुए सत्ता की बागडोर अपने हाथों में ले ली। " प्लासी युध्द" की सफलता ने उन्हें भारत की शासन व्यवस्था में प्रवेश करने का अवसर मिल गया। इस प्लासी युध्द को रणजितसिंह दरडा जीने इस प्रकार वर्णित किया है, " अंग्रेजों ने बंगाल की राजनिति में भी हस्तक्षेप प्रारंभ कर दिया। बंगाल का नबाब सिराजुद्दीला ने अंग्रेजों को अपनी बस्तियों की किलाबन्दी से इन्कार किया परन्तु अंग्रेजों ने आज्ञा का पालन नहीं किया। १७५७ में प्लासी का युध्द हुआ, जिसमें मीर जाफर की देश द्रोहिता के परिणाम स्वरूप सिराजुद्दौला पराजित हो गया। "[१३]

अंग्रेजोंने बंगाल के गद्दी से मीर जाफर को हटाकर मीर कासिम को बंगाल का नबाब बनाया। किन्तु मीर कासिम एवं कंपनी सरकार में युध्द हुआ। इस युध्द का उल्लेख यहाँपर मिलता है, " १७६४ ई. में मीर कासीम एवं अंग्रेजों मे बक्सर का युध्द हुआ "[१४] मीर कासिम बक्सर युद में पराजित हो गया।

१९ वी सदी के प्रारम्भिक वर्षों में देश में व्याप्त हीन राजनैतिक अवस्था

का लाभ उठाकर १८५७ ई. को अंग्रेजों ने अपने युध्द कौशल एवं कूटनीति से सम्पूर्ण भारतवर्ष कम्पनी के शासन के अंतर्गत ला दिया।

[२] सन १८५७ ई. के स्वाधीनता संग्राम के कारण -

भारतवर्ष में विदेशी शासन से मुक्ति पाने का सर्वप्रथम व्यापक प्रयास सन् १८५७ ई. मे हुआ। इस घटना के लिए निम्नलिखित युगीन परिवेश कारणों के रूपमें सिध्द हुआ है। [प्रस्तुत सामग्री रणजितसिंह दरडा के " भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास " ग्रंथ के आधार पर तैय्यार की गई है।]

[अ] राजनैतिक कारण:

लार्ड डलहौजी ने अपने शासन काल में " व्यपगत सिध्दान्त " की नीति को कठोरता पूर्वक अपना कर अनेक देशी राज्यों को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया।

अंग्रेजो ने नाना साहब के प्रति भी अन्याय किया। उनकी पेन्शन बन्द कर दी। बाजीराव व्दितीय को कम्पनी ने बकाया पेन्शन के बासठ हजार रूपए देने से इन्कार कर दिया एवं नानासाहब को यह नोटिस दिया गया कि बिठूर की जागीर भी कम्पनी सरकार अपनी इच्छानुसार जब चाहे छीन लेगी। इस व्यवहार से नानासाहब अंग्रेजो के शत्रु बने। अंग्रेजों ने मुगल सम्राट बहादुरशाह जफर के साथ भी दुर्व्यवहार किया। अंग्रेजों ने भारतीय सैनिको, जमीदांरो, कुलीनों एवं राजा महाराजाओं के विशेषाधिकार व सुविधाएँ छीन ली। जिससे उच्चवर्गमें असंतोष हो गया, औरवेसंघर्ष करने पर उतरे।

[आ] आर्थिक कारण :

अँग्रेजी साम्राज्य की स्थापना से भारत का आर्थिक शोषण प्रारंभ हो गया था। १९ वी शताब्दी में औद्योगिक क्रान्ति हो गयी, जिससेअंग्रेजों का उत्पादित माल के विक्रय के लिए भारत कोप्रधान बाजारपेठ बना दिया तथा भारत से रूई और अन्य कच्चा माल इंग्लॅड भेजना प्रारम्भ कर दिया। फलस्वरूप भारतीय उद्योग-धन्दे नष्ट हो गए। लार्ड विलियम बैंटिंक ने बहुत -सी कर मुक्त एवं इनाम की भूमि को छीन लिया। इससे अनेक भूमिपति विपन्न एवं गरीब हो गए।

[इ] सामाजिक कारण :

अंग्रेज शासकों की नीतियों का भारतीयों के सामाजिक जीवन पर भी बुरा प्रभाव पडा। अंग्रेजों ने उच्च वर्ग की सम्पत्ति, भूमि, पद, जागीरे तथा पेन्शान आदि छीन ली। इन सब के कारण उनकी सामाजिक स्थिति, मान-मर्यादा एवं कीर्तिप्रतिष्ठा को गहरा धक्का पहुँचा। साथ - साथ भारत की अशिक्षित जनता ने रेल, तार आदि के नये -नये प्रयोगों की उपयोगिता को न समझकर अपने धार्मिक एवं सामाजिक जीवनमें हस्तक्षेप मान लिया। अत: इन सब सामाजिक सुधारों का भारतीयों ने विरोध कर दिया।

[ई] धार्मिक कारण :

सन १८५७ के संघर्ष का एक मुख्य कारण था भारतीयों को ईसाई बनाने की अंग्रेजों की बडी भारी इच्छा थी। अंग्रेजों के मिशनरी स्कूल में पढनेवाले बच्चों को ईसाई धर्म का ज्ञान कराया जाता था। अत: भारतीयों के मन में यह शंका पैदा हो गयी कि उनकी संतति निश्चय ही ईसाई हो जाएगी। लॉर्ड डलहौजी व्दारा गोद लेने की प्रथा का निषेध भी हिन्दू धर्म-शास्त्र के अन्दर हस्तक्षेप माना गया और इससे भी हिन्दुओं की धार्मिक मान्यताओं को बडी भारी ठेस लगी।

[ए] सैनिक कारण :

सन १८५७ ई के संघर्ष का सबसे महत्वपूर्ण कारण सैनिक आक्रोश था। हिंदुस्थानी सैनिकों को प्रदत्त सुविधाओं में भी भारी अन्तर था। भारतीय सैनिकों का वेतन व भत्ता अंग्रेज सैनिकों से बहुत कम था। ऊँचे पदों पर केवल अंग्रेजों को ही नियुक्त किया जाता था। लार्ड केनिंग ने भारतीय सैनिकों के लिए यह नियम बना दिया कि वे भारत से बाहर भी जाने के लिए बाध्य होंगे। इससे इन कुलीन उच्च- वंशीय लोगों में बडा असंतोष फैल गया। चर्बी से युक्त कारतूसों के विवाद ने तो आग में घी का काम किया।

[ऐ] अफवाहें :

सन १८५७ ई के संघर्ष के मूल में कुछ अफवाहों का भी योग था। अफवाह यह थी कि कारतूसों में, जिन्हें प्रयोग करने के पहले उनके दोनों सिरों को सैनिकों को दातों से काटना होता था, गाय व सुअर की चर्बी मिली रहती है।

[३] सन १८५७ ई. के संघर्ष की असफलता के कारण -

सन १८५७ ई. के संघर्ष की असफलता के कारण निम्नलिखित हैं -

[१] संघर्ष निश्चित समय से पूर्व ही आरम्भ हो गया यह असफलता का पहला कारण है।

[२] विस्फोट असमय हो जाने से यह आन्दोलन उत्तर भारत तक ही सीमित रहा।

[३] संघर्ष कारियों के पास युध्द सामग्री तथा साधन का अभाव था।

[४] क्रान्तिकारियों में नेतृत्व का भी अभाव था।

[५] असुविधा के कारण हिंदुस्थानी सैनिकों ने संघर्ष झंडा खड़ा किया था

[६] मुगल बादशाह के गौरव को पुन: प्रतिष्ठापित करना तथा झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई अपने गोद लेने के अधिकार से तथा नानासाहब अपनी पेन्शन से वंचित हो जाने के कारण युध्द किया।

[७] संघर्षकारियों में उद्देश्य की एकता तथा स्वतंत्र भारत की स्थापना का श्रेष्ठ ध्येय नहीं था।

सत्तावनी क्रान्ति के प्रधान स्थान केन्द्रों के प्रसिध्द वीरों के अतिरिक्त ऐसे अनेक गौण स्थान और उनके प्रामाणिक किन्तु आख्यात वीर-पात्र हैं, जो इतिहासकारों एवं उपन्यासकारों से ओझल रहे हैं। और अपने प्रकाशन को माँग कर सकते हैं। उन पर दृष्टि देने से सत्तावनी क्रान्ति का सही अर्थ में व्यापक स्वरूप सामने आ जाता है।

डा. जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द के सर्व प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास का नाम है, " क्रान्तिवीर तात्या टोपे " यह उपन्यास इतिहास प्रधान है। लेखक के इतिहास तत्व के विनियोग के आधारभूत उपकरण है, ऐतिहासिक पात्र, घटनाएँ, तिथियाँ तथा घटना स्थलों के नाम। श्री मिलिन्दजी भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के एक विनम्र सैनिक रह चुके हैं, यहाँपर इस बात का उल्लेख मिलता है, " केवल एक लेखक ही के रूप में नही, सन १९२० से १९४७ तक के भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के एक विनम्र सैनिक के रूप में भी। "[१५] स्वयं स्वतन्त्र सेनानी होने के नाते उन्होंने वीर तात्या टोपे उपन्यास लिखा।

(I) "क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास की ऐतिहासिक विशेषताएँ :-

[१] "क्रातिवीर तात्या टोपे" उपन्यास की विषयवस्तु का आधार इतिहास -

इतिहास का शाब्दिक अर्थ है - ' ऐसा ही था ' या ' ऐसा ही हुआ ' । इसका मतलब यह हुआ कि इतिहास में घटनाओंका यथार्थ वर्णन होता है। उसीप्रकार जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द जी कृत " क्रांन्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास यह एक ऐतिहासिक सत्य घटनापर आधारीत है। इस उपन्यास के विषयवस्तु का आधार इतिहास है। सन् १८५७ ई. को स्वतन्त्रता संग्राम यह एक इतिहास सम्मत घटना है, जिसमें क्रांतिवीर तात्या टोपे प्रधान सेनानायक थे। जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द जी ने आपने उपन्यास को नायक तात्या टोपे को लेकर लिखा है। इस उपन्यास का कथानक और पात्र-घटना आदि सभी ऐतिहासिक होने के कारण यह ऐतिहासिक उपन्यास कहलाता है।

[२] "क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में इतिहास और वर्तमान का सम्बंध -

इतिहास वर्तमान युग को बहुत कुछ ज्ञान देता है। और वर्तमान युग इतिहास को गौरवपूर्ण दृष्टि से देखता है। उसी तरह मिलिन्दजी ने "क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में उन्होंने शूर वीर तात्या टोपे के देश के प्रति बलिदान का अवर्णनीय चित्रण किया है। इस उपन्यास को पढने से वर्तमान पीढी को बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त होता है। आज जबकि देश में चतुर्दिक नैतिक--ह्रास और राष्ट्रीयता का विखंडन होता जा रहा है, ऐसेमें ओजस्विनी कृतियों की बडी आवश्यकता महसूस होती है। उसीतरह मिलिन्दजी ने इस उपन्यास में इतिहास और वर्तमान के सम्बंन्ध को बताने का प्रयास किया है।

[३] "क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में यथार्थ और कल्पना का समन्वय -

ऐतिहासिक उपन्यास के अंतर्गत यथार्थ और कल्पनाकासमन्वय होता है। सिर्फ यथार्थ को लेकर उपन्यास लिखा जाय तो वह इतिहास बनकर रहता है, और सिर्फ कल्पना ही होगी तो कल्पनाप्रधान उपन्यास होगा है।" क्रांतिवीर तात्या टोपे " इस उपन्यास में मिलिन्दजी ने सन १८५७ ई. के स्वतन्त्रता संग्राम की महान घटना तथा संग्रामके प्रमुख सेनानायक तात्या टोपे के शौर्य, क्रांतिसंगठन आदि बातों को दिया है। उपन्यास के अंतर्गत कल्पना का भी आश्रय लिया गया है। उपन्यास में कल्पित पात्र, स्थल आदि को लिया गया है। मिलिन्दजी ने यथार्थ और कल्पना का समन्वय कर क्रांतिवीर तात्या टोपे

उपन्यास सफल तथा सजीवपूर्ण बनाया है।

[४]"क्रान्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में ऐतिहासिक पात्र -

डॉ. जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द जी कृत- "क्रान्तिवीर तात्या टोपे " नामक उपन्यासों में कुछ गिने-चुने पात्रों की सृष्टि है, जिनमें कुछ प्रमुख है और कुछ गौण। इस उपन्यास के प्राय: सभी पात्र ऐतिहासिक है। उनमें प्रमुख पुरुष पात्र हैं - तात्या टोपे, बाजीराव पेशवा व्दितीय, नानासाहब, बहादुरशाह जफर, कुँवरसिंह, मंगल पाण्डे, अजीमुल्ला खाँ आदि। विद्वान लेखकने प्रस्तुत उपन्यास में नारी पात्रों के रूप में झाँसी की रानी, अवध की बेगम हजरतमहल आदि का उल्लेख किया है। बाजीराव पेशवा व्दितीय की पत्नी सरस्वतीबाई और तात्या टोपे की पत्नी जानकीबाई गौण नारी पात्र है।

[अ] तात्या टोपे :

"क्रान्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास का नायक तात्या टोपे है। उनके संघर्ष की कहानी सम्पूर्ण उपन्यास में व्याप्त है। वे घटना चक्र को घुमाते रहते हैं। " एक बार रामचंद्रराव येवलेकर के एक अत्यंत साहस एवं वीरता पूर्ण कार्य से प्रसन्न होकर बाजीराव ने उन्हें एक रत्नजटित टोपी उपहार स्वरूप दी, जिससे वह टोपे कहलाने लगे। आगे चलकर रामचंद्र पांडुरंग येवलेकर तात्या टोपे के नाम से प्रसिध्द हुए और १८५७-५८ के स्वतन्त्रता संग्राम में उन्होंने सेनापति कार्य किया। "[१६]

इस ऐतिहासिक उपन्यास के बारे में अनेक समीक्षकोंने अपना अभिमत व्यक्त किया है। - मिलिन्द जी ने " क्रान्तिवीर तात्या टोपे " शीर्षक उपन्यास व्दारा सन १८५७ में स्वतन्त्रता-संग्राम के एक ऐसे सेनापति का संघर्षमय जीवन व्याख्यायित किया है जो आज भी नवयुवको के लिए स्पृहणीय है। "[१७] और एक आलोचक ने इस उपन्यास के बारेमें लिखा है, - " प्रस्तुत ऐतिहासिक उपन्यास " क्रान्तिवीर तात्या टोपे " श्री मिलिन्द का एक ऐसा उपन्यास है। इसमें उन्होंने भारत के सन १८५७-५८ की महान क्रान्ति के वास्तविक और व्यावहारिक प्रधान सेनापति वीर तात्या टोपे की जीवनगाथा को वर्णित किया है। "[१८] इससे यह पता चलता है कि मिलिन्दजी के उपन्यास का प्रमुख नायक, सत्य घटना सन १८५७-५८ ई की महाक्रान्ति के वीर प्रमुख सेनापति तात्या टोपे हैं।

[आ] बाजीराव पेशवा व्दितीय :

बाजीराव पेशवा व्दितीय महाराष्ट्र[पुणे] के महाराज थे। किन्तु उपन्यास में संक्षिप्त रूपमें मिलिन्द जी ने वर्णन किया है। " महाराष्ट्र से बिठूर उनके साथ उनके बहुत से कर्मचारी, आश्रित, संबंधी, सैनिक आदि आए थे। "[१९]

[इ] नानासाहब :

नानासाहब बाजीराव पेशवा व्दितीय के दत्तक पुत्र थे। " बाजीराव ने अपने देहांत के कुछ वर्ष पूर्व अपना जो उत्तराधिकार पत्र लिखा था, उसमें उन्होंने स्पष्ट रूप से यह इच्छा प्रकट की थी कि मेरे जेष्ठ पुत्र धोंडोपंत नाना पेशवाई के पद तथा बिठूर की जागीर, व्यवस्था, संपत्ति आदि के पूर्ण स्वामी होंगे और उनके वंशज भी उनके बाद के उत्तराधिकारी होंगे। "[२०] स्वतन्त्रता क्रांन्ति का नेतृत्व और स्थान " वैसे तो कानपुर ही १८५७ की क्रान्ति का मुख्य केन्द्र और नाना साहब प्रमुख नेता माने जाते हैं। "[२१]

[ई] बहादुरशाह जफर :

इस उपन्यास के पात्रों में दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह जफर का भी उल्लेख हुआ है। लेखक लिखते हैं,- " दिल्ली के दुर्ग के भारतीय प्रहरियों ने दुर्ग के व्दार क्रान्तिकारियों के लिए मुक्त कर दिए। दिल्ली की जनता ने भी -हदय से क्रान्तिकारियों का स्वागत किया। भूतपूर्व सम्राट बहादुरशाह जफर निर्धारित तिथि के पूर्व क्रांति का आरंभ किए जाने के विरूध्द थे, किंतु क्रांतिकारियों ने उन्हें विवश कर दिया कि वह उनका नेतृत्व करें। "[२२] बहादुर-शाह जफर के साथ उनकी बेगम जीनतमहल भी स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय रूपसे कार्य करती रही। उपन्यास में उसका उल्लेख मिलता है।

[फ] बिहार के क्रांतिकारी कुंवरसिंह :

बिहार में जगदीशपुर के कुंवर अमरसिंह ने संघर्षकारियों को मार्गदर्शन किया और क्रांति में सम्मिलित होना स्वीकार किया।

[ड] मंगल पाण्डे :

यह पात्र उपन्यास में क्रान्तिकारी के रूप में मिलता है। वे सन १८५७-

५८ ई के स्वतन्त्रता संग्राम के महत्त्वपूर्ण क्रान्तिकारी माने जाते हैं। मंगल पाण्डे संघर्ष का जनक माने जाते हैं। उपन्यासकार ने मंगल पाण्डे के योगदान को स्वीकारते हुए लिखा है, - " संघर्ष का प्रारंभ बैरकपुर में हुआ। २९ मार्च १८५७ को मंगल पाण्डे नामक एक सैनिक ने संघर्ष का झण्डा खडा कर दिया। "[२३]

[ऊ] अजीमुल्ला खाँ :

सन १८५७ ई. स्वतन्त्रता संग्राम के क्रान्तिकारियों में से अजीमुल्ला खाँ का नाम बहुत चर्चित है। विद्वान बतलाते हैं, - " प्रत्येक देशवासी यह भी जानता है कि जनक्रान्ति के सूत्रधार मंगल पाण्डे, नाना, झाँसी की रानी, तात्या टोपे तथा मराठा नरेश जसवन्त राव होल्कर एवं बहादुरशाह जफर दिल्ली सम्राट थे। इनमें सर्वाधिक नीति निपुण तथा प्रभावशाली संगठनकर्ता अजीमुल्ला के नाम से सब परिचित हैं। "[२४]

" क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास के नारी पात्र निम्नलिखित हैं।

[ऐ] झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई :

" क्रांन्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में मिलिन्द जी ने प्रमुख नायक तात्या टोपे के बाद रानी लक्ष्मीबाई का उल्लेख किया है, जो कि सन १८५७ ई. के स्वतन्त्रता संग्राम की एक सूत्रधार थी। मिलिन्द जी यहाँपर झाँसी की रानी बनने का तथा स्वतन्त्रता संग्राम में हिस्सा लेने का उल्लेख करते हैं, " झाँसी के राजा गंगाधरराव विधुर थे और लक्ष्मीबाई से उम्र मे अधिक बडे थे। सामान्यत यह एक विषम जोडा था, किंतु लक्ष्मीबाई ने गंगाधरराव से विवाह करना जिस कारण से, स्वीकार किया था, वह क्रान्तिकारी देशभक्ति की भावना से प्रेरित था। लक्ष्मीबाई भी तात्या टोपे का अँग्रेज से भी आधिक सम्मान करती थी और चाहती थी कि तात्या तथा उनके सहयोगियों को स्वराज्य क्रांति संग्राम में शीर्ष से शीघ्र पूर्ण सफलता प्राप्त हो। " [२५]

रानी लक्ष्मीबाई के बारेमें यहाँपर और एक बात देखनेको मिलती है, " झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई अपने गोद लेने के अधिकार से तथा नानासाहब अपनी पेन्शन से वंचित हो जाने के कारण युध्द कर रहे थे। "[२६] जिसका उल्लेख इतिहास ग्रंथों में मिलता है।

[ऐ] अवध की बेगम हजरतमहल :

अवध के राज्य को भी अंग्रेजी राज्य में मिला लिए जाने पर भूतपूर्व शासको ने क्रान्तिमेंसम्मिलित होने के हेतु अपनी सहमति भेजी। दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह जफर तथा उनकी बेगम जीनतमहल, अवध की बेगम हजरतमहल, बिहार के क्रान्तिकारी कुँवरसिंह आदि ने क्रान्ति में संम्मिलित होना स्वीकार किया। " [२७]

डॉ. जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द कृत, " क्रांन्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास के उर्पयुक्त सभी पात्रों और रणाजितसिंह दरडा के " भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास " ग्रंथ में वर्णित पात्रों में विशेष अंतर नहीं है। क्रान्तिवीर तात्या टोपे उपन्यास के प्राय : सभी पात्र ऐतिहासिक है अत: पात्रों की दृष्टि से आलोच्य उपन्यास ऐतिहासिक उपन्यास की श्रेणी में रखा जाता है।

[५] " क्रांन्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में ऐतिहासिक घटना -

" क्रांन्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में वर्णित अनेक घटनाएँ डॉ. रणाजितसिंह दरडा जो के ग्रंथ " भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास " और आचार्य दीक्षित जी के ग्रंथ " स्वाधीनता आन्दोलन और मेरठ " के साथ मेल खाती है। उपर्युक्त दो ग्रंथों में वर्णित प्रमुख घटनाएँ और क्रान्तिवीर तात्या टोपे उपन्यास की प्रमुख घटनाएँ निम्मलिखित हैं। जिनका उल्लेख ऐतिहासिक घटनाओं के रूप में किया जाता है-

[१] बाजीराव पेशवा व्दितीय ने नानासाहब [धोडोपंत] को गोद लिया
[२] नानासाहब को बिठूर की पेन्शान, जागीर एवं तत्संबंधी समस्त अधिकार से वंचित कर दिया गया।
[३] लक्ष्मीबाई ने झाँसी के राजा गंगाधरराव से विवाह किया।
[४] राजा गंगाधरराव के देहान्त के पश्चात अंग्रेजों ने उनके दत्तक पुत्र को उत्तराधिकारी स्वीकार न कर झाँसी के राज्य को हडपकर लेने का निश्चय किया।
[५] लक्ष्मीबाई ने तात्या टोपे को झाँसी की रक्षा के लिए आमन्त्रित किया किन्तु अंग्रेजों की बहुसंख्यक तथा साधनसंपन्न सेना ने एकदम तात्या की ओर आक्रमण करके तात्या की सेना को वापस जाने के लिए विवश कर दिया।

[६] मंगल पाण्डे की फाँसी क्रांति के विस्फोट का प्रथम कारण बनी।

[७] कारतूसों का उपयोग करने की अज्ञा को ९० सैनिकों में से ८५ ने यह आज्ञा अस्वीकार की। इस पर उन्हें कारावास का दंड दिया गया मेरठ की अंग्रेजी सेना के भारतीय सैनिकोंने उत्तेजित होकर कारगृह पर आक्रमण कर अपने बंदी सैनिकों को मुक्त कर दिया।

[८] क्रांतिकारियों ने दिल्ली और बादमें अलीगढ, मैनपुरी, इटावा, लखनऊ, कानपुर इलाहबाद आदि पर अधिकार कर लिया।

[९] क्रांतिकारी सेना को आगरा में अंग्रेजों ने पराजित किया बादमें आगर फतहपुर पर अंग्रेजों को सफलता मिली।

[१०] कानपुर के आसपास के कुछ भाग और बानपुर शाहगढ आदि पर अपनी सत्ता स्थापित करने में अंग्रेज असफल रहे।

[११] ग्वालियर के युध्द में स्वर्णरेखा लघुनदी पर लक्ष्मीबाई को अंग्रेजो चारों ओर से घेर लिया रानी का घोडा अड गया और पीछेसे अंग्रेज सैनिकों ने उन पर आक्रमण कर दिया। अविरत घोर युध्द करते - करते रानी ने अपने प्राणों का बलिदान कर दिया। अंग्रेजो ने ग्वालियर जीत लिया।

[१२] तात्या टोंक पहुँचकर टोंक के नवाब पर आक्रमण कर तात्या ने चार तोपों को हासिल किया।

[१३] तात्या और अंग्रेज दोनों सेना में डाबला नामक स्थान पर सामना हुआ।

[१४] चबंल नदी को पार करके तात्या झालरापाटन पहुँचे, आगे चलकर अंग्रेज सेना ने तात्यापर आक्रमण कर तात्या की २७ तोपें प्राप्त की।

[१५] आगे मुँगावली में तात्या की सेना का अंग्रेजी सेना से सामना हुआ इसमें अंग्रेजों की सेना को बहुत क्षति पहुँची।

[१६] बेतवा नदी पार करके दक्षिण की ओर रावसाहब की सेना जाते समय अंग्रेज सेना ने उनका सामना किया, रावसाहब असफल होकर तात्या के पास पहुँचे।

[१७] राजपुर में असफलता मिलनेसे तात्या बडौदा-उदयपुर जा रहे थे बीचमें ही अंग्रेजी की सेना ने आक्रमण कर दिया।

[१८] तात्या तथा रावसाहब अंग्रेजों की सेनाओं का सामना करते रहें।

[१९] प्रतापगढ के वन्य क्षेत्र में तात्या अंग्रेजों से भीड ... गए।
जीरापुर में अंग्रेजी सेना तात्या की सेना पर आक्रमण कर दिया।

[२०] देवसा नामक स्थान पर तात्या, रावसाहब, तथा फिरोजशाह गंभीर मंत्रणा भविष्य के लिए योजना बना रहे थे, तब अंग्रेजों ने उनपर अचानक आक्रमण किया। किन्तु तात्या अंग्रेजों की सेना के घेरे को तोडकर राजस्थान की ओर चले गए।

[२१] तात्या शिकर पहुँचे, तब उनपर नसीराबाद से आई अंग्रेजो की विशाल सेनाने प्रबल आक्रमण किया। रावसाहब और फिरोजशाह तात्या को छोड भाग गए।

[२२] तात्या टोपे वन्य क्षेत्र में थोडा विश्राम कर रहे थे, तब एक विश्वासघाती व्दारा अंग्रेजों को सूचना मिलने पर रात्रि में तात्या को निद्रित आवस्था में अचानक बंदी बनाया। और उनपर मुकदमा पेश... में तात्या को फाँसी का दंड दिया गया।

[२३] क्रांतिवीर तात्या टोपे अविचलित भाव तथा धीर-गंभीर गति से स्वयं ही फाँसी के तख्ते पर चढ गए तथा उन्होंने स्वयं ही प्रसन्नता-पूर्वक फाँसी का फंदा अपने गले में डाल लिया। नीचे का तख्ता खींचने के साथ तात्या प्रसन्नतापूर्वक अमर शहीद के पद पर प्रतिष्ठित हो गए।

[६] "क्रान्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में ऐतिहासिक तिथियाँ -

डॉ. रणजितसिंह दरडा के ग्रंथ " भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास " से मेल खानेवाली निम्नलिखित तिथियाँ इतिहास की कसौटीपर प्रामाणिक सिध्द होती है। क्रान्तिवीर तात्या टोपे उपन्यास में श्री मिलिन्द जी ने जिस तरह घटनाओं तथा स्थलों का उल्लेख किया उसीप्रकार तिथियों का उल्लेख ... गिने-चुने दो - तीन बार ही किया है। वह है पहली बार स्वराज्य क्रांति संग्राम हुआ, और दूसरी बार जब की स्वतन्त्रता संग्राम क्रान्ति के एक वर्ष पश्चात क्रांतिकारियों ने ग्वालियर पर अधिकार कर लिया था

[१] तारीख ३१ मई, सन १८५७ वह तारीख थी जो के निश्चित दिवस पर

भारत भर में सब स्थलों पर एक साथ क्रांन्ति कर भारत से विदेशी अंग्रेज कंपनी का शासन समाप्त कर दिया जाय।

२] तारीख ३१ मई, सन् १८५८ को क्रांतिकारियों ने ग्वालियर पर अधिकार कर लिया।

श्री मिलिन्द जी ने इस उपन्यास में अन्य कोई प्रमुख घटना की तिथि नहीं दी , यहाँ तक की मंगल पाण्डे की फाँसी तथा मंगल पाण्डे व्दारा किया क्रांति विस्फोट की तिथि तथा प्रमुख वीर नायक तात्या टोपे की फाँसी की तिथि भी नहीं दी है।

[७] " क्रांन्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में ऐतिहासिक घटना स्थल -

आचार्य दीपंकरजी के ग्रंथ " स्वाधीनता आन्दोलन और मेरठ " में १८५७ ई. के उल्लेखनीय घटना स्थलों का विवरण मिलता है। आलोच्य उपन्यास में इतिहास सम्मत घटना स्थल निम्नलिखित है।

हमें इस उपन्यास में सन १८५७-५८ ई. के स्वतन्त्रता संग्राम के प्रमुख केन्द्रों तथा प्रमुख वीर नायक तात्या टोपे जी का अंग्रेजों के साथ आक्रमण करते समय चलाकी से कठिन परिस्थितियों में भी रास्ता निकाल लेते थे। तथा अंग्रेजों को चकमा किसप्रकार देकरऔर कहाँपर छुप जाते उन घटना स्थलों का उल्लेख यहाँपर करना आवश्यक है। और इसमें आये हुए घटना स्थल इतिहास सम्मत हैं ये देखना है।

आचार्य दीपंकर जी ने अपने ग्रंथ " स्वाधीनता आन्दोलन और मेरठ " में सन १८५७ ई की क्रान्ति के ५ मुख्य केन्द्र गिनाये हैं। दिल्ली, बिठूर, कलकत्ता, लखनऊ और सातारा। परन्तु क्रान्ति के दिनों का अनुभव तथा मिलिन्द जी का उपन्यास यह सिध्द करते हैं कि क्रान्ति के वास्तविक केन्द्र मेरठ और बैरकपुर भी थे। वहीं से पूरे देश में १८५७ की क्रान्ति ज्वाला भडकी थी।

क्रान्तिकारी दल ने दिल्ली की सफलता के बाद अलीगढ, मैनपुरी, इटावा, नसीराबाद, बरेली, शाहजहाँपुर, मुरादाबाद, लखनऊ, बदायूँ, आजमगठ, सीतापुर, कानपुर, इलाहाबाद, झाँसी, फैजाबाद, सुलतानपुर, जालंधर, बस्ती आदि पर सफलता प्राप्त की। किन्तु इसमें से कुछ गांवों के नाम आधुनिक भारत के नक्से में मिलते नहीं है बाकी सब ऐतिहासिक तथा तत्कालीन नक्से की दृष्टिसे प्रामाणिक सिध्द होते हैं।

तात्या टोपे का पूरे एक वर्ष सन् १८५७ से ५८ तक के युध्द भ्रमण का विवरण दिया गया है। जिसमें निम्नलिखित नगर, गांव तथा नदियों का उल्लेख मिलता है। यह विवरण ऐतिहासिकता की कसौटीपर प्रामाणिक सिध्द होता है।

अंग्रेज और उनके गुप्तचर परछाईं की भांति तात्या टोपे का पीछा कर रहे थे। परन्तु वह टूटे नहीं। २० जून, १८५८ को वह चुपके से ग्वालियर खिसक गये कुछ भारतीय सिपाहियों को मदद की, उन्हें वान्दा के नबाब ने कुछ आर्थिक सहायत्ता दी। अपने प्राण जोखीम में डालकर बडी आशा के साथ उन्होंने भरतपुर की ओर प्रयाण किया। वहां से वह जयपुर की ओर लपके। परन्तु इसके पीछे-पीछे अंग्रेजी फौज भी जयपुर पहुँच गयी। वह उन्हे चकमा देकर टोक पहुँच गया। टोंक की सेना तथा तोपे प्राप्त करके तात्या मधुरा एवं इंद्रगढ गए। वहाँसे तात्या आपना मार्ग बदलकर बूँदी पहुँचे, बूँदी से तात्या ने रसद प्राप्त की। तत्पश्चात तात्या टोपे उदयपुर की ओर प्रस्थित हुए। तात्या की सेना अँग्रेजो की सेना चकमा देकर चंबल नदी को पार करके वन्य क्षेत्र में चली गई। अंग्रेजों की सेना निराश होकर नीमच चली गई। चंबल नदी को पार करके तात्या टोपे झातरा परटन पहुँचे। तात्या को झातरा परटन से तीस तोपे और प्रचुर युध्द सामग्री प्राप्त हुई।

झातरा पाटन में तात्या टोपे, रावसाहब तथा बॉदा के नवाब ने गंभीर विचारविमर्श करके इंदौर की ओर प्रस्थान किया। तात्या तथा उनकी सेना को अंग्रेजों ने राजगढ [रायगढ] के निकट रात्रि में विश्राम के वक्त देख लिया। किंतु, प्रभात होने के पूर्व ही, तात्या की सेना वहॉ से जा चुकी थी। इसके पश्चात् तात्या टोपे मध्यप्रदेश के गुना क्षेत्र के ईसागढ पहुँचे। ईसागढ पर आक्रमण करके रसद और सात तोपे प्राप्त की। कुछ समय पश्चात सेना का एक भाग, रावसाहब को लेकर, तालबेहट की ओर प्रस्थित हुए। फिर तात्या वहॉ से चंदेरी गए। इसके पश्चात् मुंगावली गए।

बेतवा नदी पार करके तात्या ललितपुर पहुँचे। इसके उपरांत तात्या ने दक्षिण की ओर बढने की योजना बनाई। अंग्रेजों ने बेतवा नदी पार नहीं करने दी। फिर तात्या तालबेहट पहुँचे। तात्या फिर से राजगढ पहुँचे। उन्होंने होशंगाबाद की ओर से नर्मदा पार की। इसके पश्चात् तात्या नागपुर के क्षेत्र में पहुँचे। निमाड जिले में होलकर की दो सेनाएँ साथ लेकर तात्या आगरा-

बंबई मार्ग पर पहुँचे। वहाँ से रायपुर पहुँचे। रायपुर से बडौदा और फिर उदयपुर [मेवाड] में आक्रमण करके तात्या राजस्थान की ओर चले। वहाँ से तात्या की सेनाने देवगढ के निकटवर्ती वन्य क्षेत्र में दो दिनों तक पडाव किया तात्या फिर बाँसवाडा की ओर गए। प्रतापगढ के वन्य क्षेत्र के निकट तात्या की सेना और अंग्रेजों में मुठभेड होने से तात्याने अपनी सेना तथा युध्दसामग्री मंदसौर की ओर बढा दी। तात्या बडौदा होते हुए नाहरगठ नामक स्थान की ओर गए।

जब देवसा नाक स्थान पर तात्या टोपे, रावसाहब तथा फिरोजशाह गंभीर मंत्रणा कर रहे थे, तब अंग्रेजों ने अचानक आक्रमण कर दिया। अंग्रेजो के घरे को तोडकर तात्या राजस्थान की ओर चले गए। किन्तु ७ अप्रैल, १८५९ को आधी रात के समय वन्य क्षेत्र में जब यह वीर सेनापति सो रहे थे तब एक विश्वासघाती ने तात्या टोपे को गिरफ्तार कर दिया।

" क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में युगीन पृष्ठभूमि आ गयी है, यहाँपर इस पृष्ठभूमि को देना दुबारा दुहराना होगा क्योंकी युगीन पृष्ठभूमि का भाग व्दितीय अध्याय के देशकाल तथा वातावरण के अंतर्गत दिया गया है इसलिए युगीन पृष्ठभूमि देना उचित नहीं समझा।

<u>निष्कर्ष</u> :-

" क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास के पात्र, घटना, तिथियों तथा स्थलों का उल्लेख ग्रंथकार आचार्य दीपकर जी का " स्वाधीनता आन्दोलन एवं मेरठ " और डॉ. रणाजितसिंह दरडा जी का " भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास " ग्रंथ में विवेचित ऐतिहासिक पात्र, घटना, तिथियों तथा स्थलों से मिलते जुलते हैं। ऐतिहासिक दृष्टीसे अप्रमाणिक घटना, प्रसंग, पात्र, स्थल आदि उपन्यास में मिलते हैं वह लेखक मिलिन्द जी की कल्पनाशक्ति और प्रतिभा सृष्टि है।

" क्रान्तिवीर तात्या टोपे " उपन्यास को इतिहास की कसौटीपर कसने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि, उपन्यास ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें वर्णित घटनास्थल, पात्र, प्रसंग आदि ऐतिहासिक है। उपन्यासकारने रचना को रोचक बनाने के लिए अपनी प्रतिभा सृष्टि का प्रयोग किया है। परिणाम स्वरूप उपन्यास केवल इतिवृतात्मक प्रस्तुत करनेवाला इतिहास नहीं बना है।

	लेखक	पुस्तक का नाम	पृष्ठ क्रमांक
[१]	मिश्र दुर्गा शंकर	साहित्यिक निबन्ध	९०
[२]	शास्त्री उमेश	हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास	०९
[३]	मिश्र दुर्गाशंकर	साहित्यिक निबंन्ध	८५
[४]	शास्त्री उमेश	हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास	१५
[५]	"	"	१६
[६]	मिश्र दुर्गाशंकर	साहित्यिक निबंन्ध	१०२
[७]	"	"	१०३
[८]	"मधुर" रामनारायणसिंह	हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास	१७
[९]	युध सत्यपाल	हिन्दी ऐतिहासिक उपन्यास प्रतिमान एवं विकास	०३
[१०]	"	"	०१
[११]	सिंहल शशिभूषण	उपन्यासकार वृन्दांवनलाल वर्मा	३७
[१२]	"मधुर" रामनारायणसिंह	हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास	३२०
[१३]	दरडा रणजीतसिंह	भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास	५५
[१४]	"	"	२१
[१५]	मिलिन्द जगन्नाथप्रसाद	क्रान्तिवीर तात्या टोपे [भूमिका]	०४
[१६]	"	"	२२
[१७]	पाण्डेय त्रिलोचन	क्रान्तिवीर तात्या टोपे [परिशिष्ट]	९९
[१८]	"अचल" राकेश	" "	१०६
[१९]	मिलिन्द जगन्नाथप्रसाद	क्रान्तिवीर तात्या टोपे	२१
[२०]	"	"	२५
[२१]	दीपंकर आचार्य	स्वाधीनता आन्दोलन और मेरठ	५९
[२२]	मिलिन्द जगन्नाथप्रसाद	क्रान्तिवीर तात्या टोपे	४२
[२३]	दरडा रणजितसिंह	भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास -	५०
[२४]	दीपंकर आचार्य	स्वाधीनता आन्दोलन और मेरठ	५२०
[२५]	मिलिन्द जगन्नाथप्रसाद	क्रान्तिवीर तात्या टोपे	३०
[२६]	दरडा रणजितसिंह	भारतीय स्वतंन्त्रता आन्दोलन एवं - संवैधानिक विकास	५१
[२७]	मिलिन्द जगन्नाथप्रसाद	क्रान्तिवीर तात्या टोपे	३६

अध्याय चतुर्थ

" क्रान्तीवीर तात्या टोपे" उपन्यास में राष्ट्रीयता

" क्रान्तीवीर तात्या टोपे " उपन्यास की ऐतिहासिकता को देखने के पश्चात उपन्यास में राष्ट्रीयता महत्वपूर्ण अध्याय है। जिन-साहित्यकारों ने भारत के स्वाधीनता-संग्राम में सक्रिय भाग लिया, उनमें से कुछ ऐसे भी थे जो प्रचार से अवसंवादिता से दूर रहें। उन्होंने बडे से बडे पद का मोह त्याग दिया। निश्चल भाव से वे अपने साहित्य में राष्ट्रीय भावना का प्रतिपादन करते रहें। मध्यप्रदेश के श्री. मिलिन्द उन्ही मूक साधकों में से एक है।

[A] कोशीय अर्थ :

" क्रांतिवीर तात्या टोपे " उपन्यास में राष्ट्रीयता देखने से पूर्व हमें राष्ट्र और राष्ट्रीयता क्या है ? इसका अध्ययन करना जरूरी है। कतिपय विद्वानोंने राष्ट्र की परिभाषा देने का प्रयास किया है। अत: हम यहाँ प्रथम उत्पत्ति कोश के आधारपर राष्ट्र शब्द का अर्थ देखेंगे।

संस्कृत, मराठी तथा अँग्रेजी कोश

" संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी १ में इसका अर्थ है, देश, राज्य मंडळ, प्रांत, धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक आत्मीयता से पूर्ण जन समुदाय अनेक लोग, राज करोबार आदि।

" आदर्श मराठी शब्दकोश " २ में राष्ट्र का अर्थ उपर्युक्त व्यत्पत्ति अर्थ से मिलता है।

" शिक्षार्थी हिन्दी अँग्रेजी शब्दकोश " ३ में इसका अर्थ तटस्थ, पडोसी ध्वज की समृध्दी।

" मानक अंग्रेजी हिन्दी कोश " ४ राष्ट्र शब्द का अंग्रेजी पर्याय नेशन है, जो लेटिन के "नेशो" शब्द से बना है । इसका अर्थ है जाति, कौम, राष्ट्र जनपद देश/इसका दूसरा अर्थ जन्म से है।

" ऑक्सफर्ड इंग्लिश डिक्शनरी " ५ में इसका राजनितीक संघ, मित्रे, जाति, वंशक्रम, भाषा, इतिहास आदि

" बृहत मराठी-हिन्दी शब्दकोश " ६ में इसका अर्थ राष्ट्र, मुल्क, कौम आदि

" इंग्लिश-हिन्दी पायोनियर २० शताब्दी डिक्शनरी " ७ में इसका अर्थ जाति [प्रजा] एक देश या राज्य के लोग

" भार्गव आदर्श शब्दकोश " ८ में इसका अर्थ है। राज्य, देश, प्रजा।

हिन्दी शब्दकोश :

हिन्दी शब्दकोश में "राष्ट्र" शब्द के अर्थ इसप्रकार दिए गये है -

" हिन्दी शब्दसागर " ९ में इसका अर्थ देश या राज्य में बसनेवाला समुदाय। इसका दूसरे अर्थ-राज्य, देश, मुल्क/प्रजा आदि दिए गए है।

" नालंदा विशाल शब्दसागर " १० में इसका अर्थ है वह लोक समुदाय जो एक ही देश में बसता हो या जो एक ही राज्य या शासन में रहता हुआ एकता बध्द हो।

" आधुनिक हिन्दी शब्दकोश " ११ में इसका अर्थ है किसी निश्चित क्षेत्र, संस्कृति और भौगोलिक एकता को प्रकट करनेवाला भूखंड और उसके लोक, एक प्रदेश संस्कृति, आर्थिक जीवन, भाषा और शासन में निबध्द, जनता का ऐतिहासिक समुदाय। उपवर्तन नीवृत/इसके दूसरे अर्थ में जनता जन, लोक प्रजा, किसी देश के वासी आदि

" मानक हिन्दी कोश" १२ मे इसका अर्थ [१]राज्य/देश [२]किसी निश्चित और विशिष्ट क्षेत्र में रहनेवाले लोक जिनकी एक भाषा, एक से रीती रिवाज तथा एक-सी विचारधार होती है। [३] किसी एक शासन में रहनेवाले सब लोंगों का समूह आदि

" प्रामाणिक हिंदीकोश " १३ मे इसका अर्थराज्य/देश/इसका दूसरा अर्थ हैं एक राज्य में बसनेवाला समस्त या पूरा जन समूह।

" हिन्दी शब्दकोश १४ में इसका अर्थ

१. देश : जैसे भारत एक विशाल राष्ट्र है।

२. राज्य : जैसे जैसे सबको राष्ट्र भाषा सम्मान करना चाहिये।

३. जाति : हम एक देश और राष्ट्र के निवासी हैं।

"हिन्दी विश्वकोश " १५ में इसका अर्थ- १]राज्य, देश, मुल्क, २] प्रजा, ३] वह बाधा जो संपूर्ण देश में उपस्थित हो।"राष्ट्र"शब्द की उत्पति अर्थ देखने के बाद अब परिभाषाएँ देखेंगे -

[B] विद्वानोंव्दारा दिया हुआ अर्थ :

विद्वानोंव्दारा की गई राष्ट्र शब्द की परिभाषां :

राष्ट्र उपन्यासों के संदर्भ में इस शब्द को कई एक विद्वानों व्दारा प्रस्तुत परिभाषओं को देखेंगे।

कृष्णाकुमार बिस्सा राष्ट्र शब्द की परिभाषा करते हुए बताते हैं, "राष्ट्र शब्द में मानव चेतना की भावात्मकता निश्चित है। 'राष्ट्र' शब्द 'सर्वधातुभ्य; ष्ट्रन 'इस आदि प्रत्यय के संयोग से "राष्ट्र शब्दे ' अथवा राज्य शोभने धातु से बना है।"[१६]

विद्यानाथ गुप्त के मतानुसार राष्ट्र शब्द का अर्थ है, " रासन्ते चारु शब्द कुर्वते जन : यास्मिन प्रदेश विशेषे तद् राष्ट्रम ' किसी प्रदेश के लोग एक विशिष्ट भाषा व्दारा यहाँ विचार विनिमय करते हैं, वह स्थान विशेष राष्ट्र है।"[१७]

गोविन्द त्रिगुणायन के अनुसार "किसी भूमि भाग विशेष के मानवों की विकास प्रक्रिया जब समान आन्तरिक संस्कारों, समान वैचारिक चेतनाओं, समान राजनीतिक एवं धार्मिक आस्थाओं से अनुप्रेरित हो एक संगठन के रूप में विकसित होती है।" १८

डॉ. जनार्दन पाण्डेय के अनुसार, " एक राष्ट्र की एक संस्कृतिक और ऐतिहासिक इयत्ता होती है। भाषा, संस्कृति , साहित्य, कला, धर्म ऐतिहासिक परम्परा, सामाजिक संघटन इन सभी दृष्टियों से जिस भौगोलिक सीमा में पूर्ण एकता होती है उस भौगिोलिक इकाई को एक राष्ट्र की संज्ञा दी जाती है।" १९

सुषमा नारायण के मतानुसार "सभ्यता तथा बुध्दि के निरन्तर विकास ने मानव को कुंटुब, ग्राम तथा छोटे राज्य की सीमा के पार देश के विस्तृत भूखंड के मोह पाश में बांध दिया है। राष्ट्रीय भावना से युक्त देश को ही एक राष्ट्र की संज्ञा से अभिहित किया जाता है।" २०

डा. सुधाकर शंकर कलवडे के अनुसार- "राष्ट्र प्रथमत: देश होता है। एक देश 'देश' की संज्ञा से ऊपर उठकर राष्ट्र की संज्ञा को तभी प्राप्त करता है जब कि उसके निवासियों में कुछ सामान्य विशेषताओं के आधारपर घनिष्ठ संमबध स्थापित हो जाता है तथा वे सब अपने को देश - की इकाई के रूप में देखते हैं। " २१

आजकाल अधिकांश मान्य परिभाषा इस प्रकार है, "राजनैतिक स्वातंत्र्य तथा प्रभुसत्ता एवं प्रादेशिक अखंडता प्राप्त समाज ही राष्ट्र है।"

[C] राष्ट्र का स्वरूप :

राष्ट्र का स्वरूप समझने के लिए हमें जानना होगा कि राष्ट्र क्या है ?. राज्य और राष्ट्र में क्या अंतर है ? देश एक भौगोलिक इकाई है, राष्ट्र एक राजनीतिक इकाई है। देश भौगोलिक इकाई होने के कारण

एकही बना रहता है। अंत: एक ही देश में अनेक राष्ट्र हो सकते हैं। उदा. भारतवर्ष एक उपमहाद्वीप के रूप में आनादि काल से ही अपनी एक स्वतंत्र - भौगोलिक इकाई बना रहा है, पूर्व काल में वह सैकडों राज्यों में विभक्त था। लेकिन भारत में आनेवाले अनेक सम्राटोंने उसे छोटे छोटे राज्यों में बाँट दिया। यह राज्य साम्राज्यों मे एक स्वतंत्र इकाइयाँ बनी रही। इस तरह एक देश के अन्दर अनेक राज्य बन गये।

[D] राष्ट्र और राष्ट्रीयता :

राष्ट्रीयता राष्ट्र के प्रति प्रेम भावना, ममत्व या अपनत्व का भाव लिए होती है। वास्तव में राष्ट्रीयता को शब्दो में बांधना कठीण है। राष्ट्र के प्रति भावना ही राष्ट्रीयता है।

विद्वानों द्वारा की गई राष्ट्रीयता की परिभाषा :

डा. सुधाकर शंकर कलवडे राष्ट्रीयता की परिभाषा देते हुए लिखते हैं, -"जन-समूह की वह भावना, जो ऐतिहासिक विशिष्ट परम्पराओं से प्रेरणा पाती है, और जो अपने समाज को एक इकाई मानकर उसके विविध अंगों को व्यवस्थित, शासित स्वाधीन एवं समृध्द बनाने की कार्यशीलता प्रदान करती है, राष्ट्रीयता है।"[२२]

डा. सुषमा नारायण के अनुसार- "राष्ट्र के प्रति तीव्र एवं गहन अपनत्व तथा ममत्व की भावना में राष्ट्रीयता का जन्म हुआ है।"[२३]

डा. गोविंद त्रिगुणायन के मतानुसार "संगठन के विकास, उन्नयन और हितार्थ जो जो क्रियाएं, अस्थाएँ, धारणाएँ और चेतनाएँ विकसित होती है, इन सब के सामूहिक नाम को राष्ट्रीयता कहते हैं। " [२४]

डॉ. कृष्णकुमार बिस्सा के अनुसार, - " किसी राष्ट्र के जन समुदाय के सामूहिक गौरव की अनुभूति का होना राष्ट्रीयता का प्रमुख लक्षण माना गया है। "[२५]"

डॉ. जनार्दन पाण्डेय के अनुसार, "राष्ट्र के प्रति निष्ठा, विश्वास, और प्रेम की भावना का नाम ही राष्ट्रीयता है।"[२६]"

राष्ट्रीयता के प्रति पाश्चात विचारकों के अनेक मत मिलते हैं। विधानाथ गुप्त जी ने हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना" में प्रमुख विद्वानों के विचारों को संकलित करते हुए संक्षेप में दिया है। उनमें प्रमुख हैं गिलक्राइस्ट।

गिलक्राइस्ट इस शब्दों में व्यक्त करते हैं,- "राष्ट्रीयता एक ऐसी आन्तरिक भावना है। जो उन लोगों में उत्पन्न होती है जो एक ही जाति तथा स्थान से सम्बन्ध रखते हों, जिनकी भाषा, धर्म, इतिहास तथा आचार - विचार सामान्य हों तथा एक ही राजनैतिक आदर्श से संगठित हों।"[२७]

होल कोम्बे का कथन है,- "राष्ट्रीयता एक सामूहिक भाव है, एक प्रकार की साहचर्य की भावना है, तथा पारस्पारिक सहानुभूति है, जो एक स्वदेश विशेष से सम्बन्धित होती है, इसका उद्भव सामान्य पैतृक स्मृतियों से होता है, चाहे वे महान कर्तृत्व और गौरव की हों अथवा विपत्ति तथा कष्टों की।"[२८]

[६] राष्ट्र और राज्य का संबंध एवं अंतर ::

राष्ट्र और राज्य लगभग सामानार्थी है। राज्य के लिए निश्चित भू-भाग उस भू-भाग पर बसने वाला जन समुदाय, सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राज सत्ता और शासन व्यवस्था आवश्यक है। येतत्व राष्ट्र के लिए आवश्यक हैं। राष्ट्र एक विकासशील संस्था है। राज्य व्यक्तियों का ऐसा समुदाय है, जो अन्य समुदायों से ऊपर है। एक राज्य में कई राज्य नहीं हो सकते। किसी राज्य के निवासियों के लिए यह आवश्यक नहीं कि उनमें परस्पर राष्ट्रीय एकता की भावना हो ही। किसी भी राष्ट्र के जन समुदाय व्दारा उस राष्ट्र के संदर्भ में मान्य विचारधारा को राष्ट्रवाद कह सकते हैं। १९ वीं शताब्दी में राष्ट्रवादी विचारों का उद्भव हुआ। तब से राष्ट्रवाद का विकास होता रहा है।

राष्ट्र को सुदृढ बनाने वाले प्रमुख तत्व दुर्गाशंकर मिश्र जी ने निम्नलिखित बताएँ हैं। [१] भौगोलिक एकता, [२] जातीय एकता, [३] सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परम्परा की एकता, [४] भाषा की एकता, [५] धर्म की एकता, [६] आर्थिक और राजनैतिक आकांक्षा की एकता।

राष्ट्रवाद राष्ट्र की भावनाओं से ओत-प्रोत एक विचारधारा है। यह विचारधारा जड़ नहीं है बल्कि राष्ट्रीय जनसमुदाय के चेतन मन को अभिव्यक्त करती है। विश्व का अन्तराष्ट्रीय स्वरूप राष्ट्रवाद के महत्तम स्वरूप का ही परिणाम है। किसी भी प्रकार का संकुचित दृष्टिकोण, चाहे वह जातीय, धार्मिक, सामाजिक अथवा भौगोलिक हो, राष्ट्रवाद का विरोधी है।

राष्ट्रवाद के प्रकार डॉ. सुधाकर शंकर कलवडे के पुस्तकसे लिये गये हैं, जो यहाँपर निम्नलिखित रूपमें मिलते हैं, "१] आक्रामक राष्ट्रवाद, २] स्वयं तृप्त राष्ट्रवाद, ३] उदारमानी राष्ट्रवाद, ४] साम्यवादी राष्ट्रवाद, ५] स्वाधीनता-वादी राष्ट्रवाद।"[२९]

[१] वैदिक युग में राष्ट्रीय चेतना ::

राष्ट्रीय भावना की झलक भारत में वैदिक वाङ्मय से लेकर आधुनिक हिंदी काव्य तक निरन्तर विद्यमान रही है। वैसे देखा जाए तो राष्ट्रीय भावना हिंदी साहित्य के काव्य विधा में कूट-कूट कर भरी हुई है। वैदिक काल की राष्ट्रीय भावना को व्यक्त करते हुए दुर्गाशंकर मिश्र लिखते हैं, -"सच तो यह है कि हमारे देश में पहले से ही एक पताका के नीचे एकत्र होने की प्रवृत्ति मिलती है और "पृथिव्यै समुद्र पर्यंताया एक राष्ट्र" की घोषणा से यह स्पष्ट है। वैदिक साहित्य में तो पारस्परिक सद्भाव की वृध्दि पर स्पष्टतया जोर दिया गया है और "ऋग्वेद" में एक स्थल पर कहा भी गया है "तुम लोगों के समस्त संकल्प समान हों, समस्त -हृदय एक हों और अंत:करण समतुल्य हो, जिससे तुममें परम एकत्व का संचार हो।"[३०]

हमारे देश में भूमि को जन्मभूमि, पुण्यभूमि, मातृभूमि तथा स्वर्गभूमि माना गया है और जन्मभूमि को जननी के समान घोषित करते हुए उसे स्वर्ग

से भी महत्तर कहा है,- "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपिगरीयसी।"

[२] उपनिषदों एवं ब्राम्हण ग्रंथ काल में राष्ट्रीय चेतना :

उपनिषदों व ब्राम्हण ग्रन्थों में भी राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति अनेक स्थलों पर मिलती हैडॉ. कृष्णकुमार बिस्सा इसका उल्लेख करते हुए लिखते हैं, - " उपनिषद में जातीय एकता का संदेश दिया गया है। भारत का प्राचीन नाम आर्यावर्त है,और यह आर्यजाति की क्रीडा - स्थली रही है। आर्यों ने जातीय एकता के व्दारा राष्ट्रीय एकता को सुदृढ किया था। संस्कृत भाषा व तीर्थ स्थलों ने भी राष्ट्रीय एकता को सुदृढ किया।" [३१] राष्ट्रीयता इस अध्याय में संगृहित सामग्री अनेक साहित्यों में मिलती है। अध्याय के अंतर्गत दी गयी उपर्युक्त सामग्री साहित्यकार कृष्णकुमार बिस्सा के ग्रंथ सेली है। निम्नलिखित सामग्री दुर्गाशंकर मिश्र के" साहित्यिक निबन्ध" से ली गयी है।

[३] आदिकालीन हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना :

यों वैदिक काल ही में राष्ट्र प्रेम के दर्शन होते हैं। हिन्दी साहित्य का आदिकाल अनेक आघातों -प्रतिघातों का काल था और एक ओर तो विदेशी आक्रमणकारियों के हमेशा के होनेवाले आक्रमणों से भारतभूमि आक्रान्त हो उठी थी। दूसरी ओर झूठी शान और आन के कारण देशी राजा आंतरिक संघर्ष से परेशान थे। ऐसे विषम परिस्थिति में अनेक आश्रित कवि तथा लेखकोंने अपने राजाओं की स्तुती के रूप में रचना की। दुर्गाशंकर मिश्र जी का कहना हैं, "कतिपय विचारक इन रचनाओं की राष्ट्रीय भावना को संकुचित मानते हैं। पर विचारपूर्वक देखा जाय तो राष्ट्रीय भावनाओं को उद्बुध्द करने में इन वीर रचनाओं का विशेष महत्व है। " [३२] वैसे देखा जाय तो संकुचित राष्ट्रीयता चारण कवियों में भी देखी जा सकती है।

चारण कवियों ने अपने आश्रयदाता की प्रशंसा मुक्त कंठ से की है। अपनी जीविका प्राप्ति के लिए उन्होंने अयोग्य राजाओं और सामंतों की भी प्रशंसा की है। उदा. जयचन्द जैसे देशद्रोही के विरुध्द कहने के बजाय उसका गुणगान गाया गया है। उस समय राष्ट्र शब्द संपूर्ण भारत के लिए

अपनाया नहीं जाता था बल्कि अपना-अपना प्रदेश और राज्य का ही अर्थ ग्रहण किया जाता था। उदा. अजमेर और दिल्ली मे राजकवि को कन्नौज और कलिंजर के समृध्द अथवा उजेड जानेपर कोई हर्ष या दु:ख नहीं होता था। उस समय के राजाओंने अपने सौ- पचास गावोंको ही राष्ट्र समझा रखा था। अत: उनके कवियों ने ही उन्हींका अनुकरण किया। वस्तुत; देश का यह एक दुर्भाग्य था। यदी उस समय राष्ट्रीयता का व्यापक रूप होता तो निश्चित ही हमारे देश का मानचित्र आज कुछ और ही होता।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल में यदि एक ओर चारणकवियों व्दारा रासो ग्रंथों की परम्परा विकसित हुई तो दूसरी ओर अपभ्रंश साहित्य का भी समुचित विकास हुआ। जातीय एवं धार्मिक कट्टरता, संकुचित दृष्टिकोण एवं राजनीतिक विव्देश के कारण राष्ट्रीय भावनाओं के विकास में कुछ बाधाएँ उपस्थित हुई, फिर भी आदिकाल से मध्यकाल तक राष्ट्रीयता की भावना विध्यमान रही है।

[४] मध्ययुगीन हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना ::

हिंदी साहित्य के पूर्व मध्यकाल और उत्तर मध्यकाल में राष्ट्रीयता प्रत्यक्ष रूप से पनप ही नहीं सकती थी। वह केवल जातीयता के रूप में ही सिमटकर रह गयीथी। मध्यकाल की दो धाराएँ रहीं, भक्तिकाल और रीतिकाल

भक्तिकाल की निर्गुण धारा के प्रसिध्द कवि कबीर के समय में कुछ ऐसी राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियों निर्मित हो गयी थी कि देश का कल्याण इसी में है कि हिन्दू -मुसलमानों का पारस्पारिक विरोध किसी न किसी प्रकार शांत हो जाय। इस प्रकार राष्ट्रीयता का स्वरूप परिवर्तित हो गया और उसका विकास केवल हिन्दुओं की ही नहीं बल्कि हिन्दु-मुस्लिम एकता पर भी निर्भर था।

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में कबीर, जायसी, दादू नानक आदि संतों एवं सूर, तुलसी आदि भक्तों ने धार्मिक -सांस्कृतिक समन्वय स्थापित कर पूर्व भारतीय समाज को एकसूत्र बाधने का प्रयत्न किया। कबीर के अलावा अन्य संत कवियों ने हिन्दू -मुस्लिम एकता की भावना करने में अपना महत्व पूर्ण योग दिया है और उनकी यह ऐक्य भावना सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की कोटि में आती है। संत कवियों के समान सूफी कवियों ने भी अपनी प्रेम

गाथाओं मे हिन्दू - मुस्लिम एकता का सफल प्रयास किया है और उन्हें निस्संकोच सांस्कृतिक एकता का निर्माण कर्ता कहा जा सकता है।

भक्तिकालीन सगुण धारा में भी राष्ट्रीय भावना के दर्शन होते हैं और इस धारा की कृष्ण- भक्तिशाखा के प्रतिनिधि कवि सूरदास ने प्रेम एवं वात्सल्यपूर्ण भक्ति के आधार पर जातीय जीवन की निराश आत्मा में आशा का संचार कर तत्कालीन समाज का सच्चा प्रतिनिधित्व किया। उसी प्रकार रामभक्ति धारा के प्रतिनिधि कवि गोस्वामी तुलसीदास सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के श्रेष्ठतम नायक कहे जाते हैं। दुर्गाशंकर मिश्र लिखते हैं, "तुलसी काव्य में राष्ट्रीयता कही मातृभूमि के प्रति अनुराग बनकर व्यक्त हुई है तो कहीं राम-सुग्रीव की मित्रता में राष्ट्रीय एकता प्रतिध्वनित हो रही है और रावण का नाश राष्ट्र पर छायी हुई विपत्ति के नाश की सूचना देती है।"[33]

रीतिकाल में राजनीतिक, सामाजिक एवं जातीय जीवन में घोर पतन आ गया था। रीतियुक्त श्रृंगारिक रचनाओं द्वारा राज्याश्रित कवियों ने अपने आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने के लिए विलासपूर्ण श्रृंगारिक रचनाओं का निर्माण किया। केवल भूषण ने देश तथा जाति के लिए अपनी वाणी को मुखरित किया। दुर्गाशंकर मिश्र जी लिखते हैं,- "रीतिकालीन काव्य में तो श्रृंगार की ही प्रधानता रही है पर महाकवि भूषण अवश्य श्रृंगार के उद्दाम वेग की अवहेलना करते हुए राष्ट्रीयता को अक्षुण्ण बनाए रखने में समर्थ रहे हैं। यद्यपि कुछ समीक्षक भूषण की कविता में हिन्दुओं का जय घोष और मुसलमानों का विरोध देख उन्हें राष्ट्रीय कवि न मानकर जातीय कवि मानते हैं पर हम उन्हे राष्ट्रीय कवि मानते हैं।" [34]

[५] आधुनिक युग में राष्ट्रीय चेतना ::

बीसवी शताब्दी का प्रारम्भ होते ही राष्ट्रीयता की भावना ने राजनीतिक आन्दोलनों का रूप धारण कर लिया। इन आन्दोलनों का बीज उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्ध में ही पड़ चुका था। सन् १८५७ के स्वाधीनता आन्दोलन के रूप में राष्ट्रीयता की पहली चिंगारी फूटी थी। इस व्यापक आन्दोलन का प्रभाव सारे देश पर पड़ा क्योंकि अँग्रेजों ने इसे दबाने के लिए जिस क्रूरता एवं बर्बरता का नंगा प्रदर्शन किया उससे

सारी जनता क्षुब्ध हो चुकी थी। झाँसी की रानी, तात्या टोपे, कुंवर सिंह, बहादुर शाह जफर आदि ने स्वाधीनता समर की बागडोर संभाली, उनकी कहानियाँ गांव-गांव में फैल गयी।

देश के कुछ महान समाज सुधारकों ने राष्ट्रीय जागरण को अपना लक्ष्य बनाकर सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय आन्दोलन को गति प्रदान की। अँग्रेजी साहित्य से उनका सम्पर्क हुआ और वे अँग्रेजी के आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन से परिचित होकर नई दृष्टि से सोचने लगे।

सन् १८८५ ई. में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना हुई। दादाभाई नौरोजी, महादेव गोविन्द रानडे, लोकमान्य तिलक, सर सय्यद अहमद खान, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, रवीन्द्र नाथ ठाकुर आदि ने सांस्कृतिक चेतना के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना विकसित करने की भरसक कोशिश की। तिलक जी के काँग्रेस में प्रवेश से काँग्रेस के हेतु में परिवर्तन आ गया। यह संस्था स्वाधीनता संग्राम का नेतृत्व करने लगी। महात्मा गांधी ने सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह के द्वारा अँग्रेजों का मुकाबला किया। आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रवर्तक भारतेन्दु ने राष्ट्रीयता की भावना विकसित करने का प्रयत्न किया। उनका साहित्य स्वाधीनता, प्रेम देशभक्ति एवं देशभाषा के गौरवगान से भरा हुआ है। उनके समकालीन कवियोंने राष्ट्रीयता को विकसित करने का प्रयत्न किया है।

आधुनिक कवियों में राष्ट्रीयता का सर्वाधिक ओजमय एवं प्रशस्त रूप दिनकर में मिलता है और विचारक कहते हैं, राष्ट्रीय कविता की जो धारा सामाजिक -आर्थिक आधार लेकर भारतेन्दु में अवतरित होती है वह मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' में अपना विकास ढूढँती हुई रामधारी सिंह "दिनकर" में चरम उत्कर्ष को प्राप्त करती है। साथ साथ प्रसाद, निराला तथा पंत आदि छायावादी कवियों की कृतियों में भी राष्ट्रीय भावनाओं का स्पष्ट चित्रण हुआ है।

पद्य साहित्य की तरह गद्य की प्राय: सभी विधाओं में राष्ट्रीयता की भावना उपलब्ध होती है। हिंदी उपन्यास में राष्ट्रीय भावना का प्रभावी चित्रण हुआ है। स्वातंत्र्योत्तर युग में अनेक उपन्यासकारों ने राष्ट्रीयता को

प्रभावी ढंग से अंकित किया है। डॉ. जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद कृत "क्रान्तिवीर तात्या टोपे" इस धारा की प्रमुख कृति है। इसमें राष्ट्रीयता का चित्रण निम्नलिखित रूपों में हुआ है।

(F) "क्रान्तिवीर तात्या टोपे" उपन्यास में अभिव्यक्त राष्ट्रीयता ::

[१] स्वदेश गौरव एवं राष्ट्रभक्ति :

राष्ट्रभक्ति तथा स्वदेश के प्रति गौरव व्यक्त करते हुए कृष्णाकुमार बिरुस्सा लिखते हैं, किसी भी देश की गुरुता, विशालता, समृध्दि अथवा गुणवत्ता से उस देश के निवासियों में गौरव की भावनाएँ उत्पन्न होती हैं। स्वभावत: व्यक्ति जिस देश में जन्म लेता है, वह जिस समाज में पल कर बड़ा होता है उस समाज और धरती से, उस स्थान से भौतिक-सामाजिक परिवेश से जुड़ जाता है। नदी-नाले, वन-पर्वत, वृक्ष लताएँ, खेत, खलिहान, पशु-पक्षी, सबके साथ तादात्म्य-सा स्थापित हो जाता है। परिवार, जाति, समाज, रीतिरिवाज, भाव, विचार सभी उसके दु:ख सुख में भागीदार होते हैं। देशभक्ति अभाव में राष्ट्रीयता संभव नहीं है।" [३५]

डॉ. बीना शर्मा देशभक्ति को राष्ट्रीयता का आधार मानती हुई स्पष्ट करती हुई लिखती है, - "देशभक्ति, जनएकता, और जन संस्कृति राष्ट्र के तीन पार्श्व है, परन्तु देशभक्ती आधार भूत है, उसके बीना राष्ट्रीयता की कल्पना नहीं की जा सकती।"[३६]

डॉ. जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद के "क्रान्तिवीर तात्या टोपे"उपन्यास में देशभक्ति मातृभूमि वंदना के रूप में व्यक्त हुई है। अपनी देशभक्ति को उपन्यास के नायक तात्या टोपे की भावना के रूप में चित्रित करते हुए वे कहते हैं, - " जनता -जनार्दन को वह भगवान का श्रेष्ठ स्वरूप मानते थे और "सत्य"- नारायण की उपासना को श्रेष्ठ उपासना। सत्यनिष्ठायुक्त एवं लोकमंगल के हेतु होनेवाले आंदोलन को वह श्रेष्ठ आंदोलन मानते थे। वह अपने प्रशंसकों को बताते थे कि जन्मभूमि जननी है। और वह स्वर्ग से भी अधिक गौरवशालिनी है। हिमालय और महासिंधु उसके जितने महत्वपूर्ण अंग है, उसका प्रत्येक कण और प्रत्येक जन भी उतना ही महत्वपूर्ण है।" [३७]

प्रत्येक देशवासी में अपने देश के प्रति अनुराग होना चाहिए। मिलिंद जी के उपन्यास में देश प्रेम एवं मातृभूमि के प्रति भक्ति की भावनाएं महत्तम रूप में विद्यमान हैं। उन्होंने क्रान्ति की मूल प्रेरणा के रूप में देशभक्ति का उल्लेख करते हुए क्रान्ति की असफलता की ओर भी संकेत करते हुए कहा है, - " यदि क्रांति की प्रथम शत्रु शिथिलता होती है, तो द्वितीय शत्रु अत्यंत आतुरता भी होती है। किंतु, मानवप्रकृति भावनामय होती है। भावना न हो, तो, देशभक्ति असंभव हो जाय और देशभक्ति के न रहने पर स्वराज्यक्रांति भी संभव नहीं हो सकता। "[३८]

रानी लक्ष्मीबाई अपना सर्वस्व अपने देशपर कुर्बान कर देशभक्ति की मिसाल कायम करती हैं वह कहती है, - " मुझे मेरी भारतमाता अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है और मैं अपने देश के स्वराज्य के लिए अपने ऐसे सर्वस्व का भी बलिदान कर सकती हूँ, जो मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय प्रतीत होता हो।" [३९]

क्रान्तिकारियों के हृदय में देश एवं देशवासियों के प्रति ममता एवं स्नेह है। " उन्होंने अपने जीवन में भारत के समस्त प्रमुख तीर्थों की यात्रा की थी और उनका विचार था कि भूतकाल के महान तीर्थयात्री ऋषियों और संतों ने अपने उच्च नैतिक चरित्र्य, निस्वार्थ भावना और अविरत परिभ्रमण से भारत की सभी दिशाओं की जनता को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में बाँधा था। प्राचीन भारत के जनतंत्र भी लोकहितकर, सशक्त और समृध्द थे। उन्होंने नृपतांत्रिक शासनों की अपेक्षा भारत को अधिक गौरवशाली बनाया था।" [४०]

मिलिन्द जी उपन्यास में देशवासियों को देश भक्ति एवं जन्मभूमि के प्रति प्रेम की प्रेरणा देते हैं, - " उस युग में स्वराज्य के हेतु देशभक्तों को अधिकतर सशस्त्र क्रांति ही का साधन ज्ञात था, अत: प्रत्येक क्रांतिकारी व्यक्ति, सैनिकों, युध्द के शस्त्रास्त्रों, दुर्गों, गुप्तचरवाहिनी आदि को अत्याधिक महत्व देता था और अपने प्राण देकर भी इन्हे, देश के लिए, किसी न किसी प्रकार से, प्राप्त करना चाहता था।"[४१]

[२] अतीत का गौरव गान ::

भारत का अतीत अति गौरवशाली रहा है। स्वर्णिम अतीत के स्मरण से खोये हुए गौरव को पुन: प्राप्त करने की प्रेरणा मिलती है। इससे देशवासियों मे देशभक्ति के भाव पनपते हैं। गौरवपूर्ण अतीत वर्तमान में प्रेरणाका संदेश देता है।

प्रत्येक राष्ट्र को अपने वैभवशाली पूर्व इतिहास का अभिमान होता है। कहा जाता है कि अपने वैभवशाली अतीत को भूलनेवाला राष्ट्र गुलामी का शिकार होता है। अत: षड्यंत्रकारी अंग्रेजों ने भारतीय लोगों के दिल-दिमाग से वैभवशाली गौरवपूर्ण इतिहास की यादें मिटाकर गुलाम का फंदा भारत के गले मे बांध दिया।

प्राचीन भारत के शूरवीरों के अतुल पराक्रम का वर्णन करके मिलिन्द जी देशवासियों को जागृत करना चाहते हैं,- " क्या तुम कह सकते हो कि तुमने उच्च नैतिक आदर्शों के अनुसार आचरण किया था तथा राज्य को जनता की धरोहर समझकर निस्स्पृह भाव से उसे संभाला था ? रामराज्य की प्रशंसा शास्त्रों ने क्यों की है ? इसलिए, कि राम ने शासनस्थ होने के पहले चौदह वर्षों तक वनवास की कठोर तपस्या की थी और तपस्या के अपरांत सत्तास्थ होने पर भी निष्कामकर्मयोगी मर्यादा पुरुषोत्तम की भाँति लोक मंगल की आजीवन साधना की थी। अपने को सुख-सुविधा के जाल में फँसाकर जनता की एक क्षण के लिए भी उपेक्षा नहीं की थी। तभी शासक के रूप में वह विश्वविख्यात हुए थे। [४२]

गौरवपूर्ण परम्परा भी राष्ट्रीय संस्कृति का ही अंग है, उनके स्मरण-मान से स्फूर्ति, प्रेरणा और बल मिलता हैं। ज्ञानदास जी गौरवपूर्ण अतीत का स्मरण करते हैं,- " संतों ने अपने उच्च नैतिक चरित्र्य, निस्स्वार्थ भावना और अविरत परिभ्रमण से भारत की सभी दिशाओं की जनता को सांस्कृतिक एकता के सूत्र मे बांधा था। प्राचीन भारत के जनतंत्र भी लोकहितकर, सशक्त और समृध्द थे। उन्होंने नृपतांत्रिक शासनों की अपेक्षा भारत को अधिक गौरवशाली बनाया था।"[४३]

राष्ट्रीय भावना का प्रसार ही प्रस्तुत उपन्यास का उद्देश है। अतीत का गौरवगान यहाँ दो मुख्य रूपों में हुआ है- भावात्मक तथा अभावात्मक। भावात्मक गान से यहाँ तात्पर्य है राष्ट्रीयता का सीधा गान और अभावात्मक गान से तात्पर्य राष्ट्रीयता के अभावत्मक पक्षों को उजागर करके राष्ट्रीय भावना को ध्वनित करना है।

भावात्मक पक्ष के अन्तर्गत अतीत के वीरों और उनके पराक्रमों का उद्बोधन करके अतीत के गौरव का गुणगान प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास का नायक प्रधान है। नायक की देशभक्ति, अदम्य वीरता, और अद्वितीय बलिदान -भावना अतीत के गौरव के रूप में प्रकट हुई है। अपन्यास के अन्य पात्रों ने भी अपने त्याग और देशभक्ति से इस गौरव को बनाए रखा है।

तात्या टोपे अतीत के गौरव हैं। स्वयं उपन्यासकार ने उपन्यास की भूमिका में उनकी वीरता के प्रति अपना सम्मान -भाव प्रकट किया है, -"भारत की उस महान क्रांति के वास्तविक एवं व्यावहारिक प्रधान सेनापति तात्या टोपे ही थे और यह प्रसन्नता का विषय है कि लक्ष्मीबाई की भाँति ही, तात्या टोपे का जन्म भी सामान्य परिवार ही में हुआ था। लक्ष्मीबाई बाद में झाँसी की रानी बनी किंतु तात्या टोपे को ऐसा कोई अवसर कभी नहीं मिला। सत्ता की जयमाला के बदले भारत की स्वतंत्रता के लिए, उन्होंने अगामी शहीदों की भाँति फाँसी का फंदा अपने गले में डालना पसंद किया।" ४४

तात्या टोपे का त्याग, बलिदान और देशभक्ति देश के लिए गौरव है - " तात्या का लक्ष्य एक प्रकार से पूर्ण हो चुका है। वह भारतीय जनता को स्वराज्य प्राप्त कराने के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर चुके हैं। जो व्यक्ति अपने लक्ष्य के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर चुकता है, वह अपना लक्ष्य प्राप्त कर चुका होता है। लक्ष्य की उपलब्धि जितनी बड़ी सफलता है, लक्ष्य के लिए प्राणों का बलिदान भी उतनी ही बड़ी सफलता है। तात्या पूर्ण सफल हो चुके हैं।"४५

[३] नवजागरण का उद्‌बोधन ::

राष्ट्रीयता का एक महत्त्वपूर्ण स्वरूप राष्ट्रीय उद्‌बोधन भी है। इसलिए उद्‌बोधन का नवजागरण करना पड़ेगा। विश्रांत करनेवाली जनता को वर्तमान परिस्थितियों के प्रति जागृत कर विद्रोह के प्रति विद्रोह करने का प्रयास अनेक लेखकों ने किया है। राष्ट्रीयता का मूल आधार है उत्साह का भाव। यदि देश के लिए कुछ करने की भावना मन में है और कार्य के लिए उत्साह न हो तो वह भावना निरर्थक हो जायेगी इसी लिए राष्ट्रीयता की भूमिका के रूप में समाज को कर्मशील बनाने के लिए अनेक साहित्यकारों ने प्रयास किया है। ब्रिटिश शासन काल में भारतीय जनता अँग्रेजों की शक्ति और विद्या-बल से भयभीत होकर निराश हो गयी थी। उनकी इस निराशा की भावना को हटाकर क्रियाशील बनाने के कार्य भावनात्मक स्तर पर करना आवश्यक था।

उपन्यासकार मिलिन्दजी ने अँग्रेजों की अत्याचारी, स्वार्थी मनोवृत्ति को चित्रित करते हुए स्पष्ट किया है कि,- " प्रत्येक अन्याय का अतिरेक की उसकी समाप्तिका आरंभ हुआ करता है। अंग्रेजों की धनलोलुपता तथा साम्राज्याकांक्षा उन्हें धीरे-धीरे भाँति-भाँति के अन्याय करने के प्रेरित करेगी और उन अन्यायों का अतिरेक ही इस देश की जनता के मानस में उनके प्रति विद्रोह की भावना उत्पन्न करेगा। आक्रमणकारी साम्राज्याकांक्षी अँग्रेजों के अन्यायों के क्रमशः शिकार बननेवाले इस देश के विभिन्न भागों के शासक भी धीरे-धीरे -हृदय से उनके विरोधी बन जायँगे। परिस्थितियाँ उन्हें विवश कर देंगी कि वे अँग्रेजी शासन के विरुद्ध विद्रोह की भावना में इस देश की जनता के साथ समरस बन जाएँ। " ४६

मिलिन्दजी ने "क्रान्तिवीर तात्या टोपे" उपन्यास में नवजागरण एवं उद्‌बोधन की भावना निम्न रूपों में अभिव्यक्त की है,-

[अ] उद्‌बोधन का अवाहन,

[आ] देश का स्वर्णिम भविष्य,

[इ] क्रांति की भावना और

[ई] बलिदान की भावना आदि

[अ] उद्‌बोधन का आवाहन ::

उद्‌बोधन का अवाहन निम्न रूपों में हुआ है -

अ] प्रेरणा और भर्त्सना तथा

आ] दासता का बोध

देशभक्ति एवं देशप्रेम की भावना विकसित करने के लिए मिलिन्दजी ने दासता की भावना का परिचय देकर लोगों में चेतना भरने का प्रयत्न किया है। सन् १८५७ ई. के संग्राम में अँग्रेजी दासता के विरुद्ध लोगों में चेतना जगाने के लिए किए गए प्रयत्नों का उल्लेख मिलिन्दजी करते हुए लिखते हैं, - "क्रांति के नेता तात्या टोपे, अजीमुल्लाखाँ, लक्ष्मीबाई, नाना साहब, नानासाहब के अनुज रावसाहब आदि सब यह चाहते थे कि क्रांति की भावना का व्यापक संगठन देश-भर में शीघ्र से शीघ्र पूर्ण हो जाय और उन समस्त भारतीय सैनिकों के-हृदयों में अँग्रेजों के शासन को भारत से पूर्णतया निष्कासित करके भारत में स्वराज्य के हेतु होनेवाली क्रांति का -हृदय से समर्थन करने की आंतरिक एवं गहन भावना उत्पन्न एवं विकसित हो जाय, जो अँग्रेजों की सेवा कर रहें हैं। वह भावना सारे भारत में एक ही समय पर सक्रिय हो जाय, जिससे अँग्रेजी शासन के शोषण से समस्त भारत भूमि और उसके निवासी मुक्त हो जायं। [४७]

अपनी मातृभूमि को विदेशी सत्ता के हाथों से छुडाने के लिए नव युवक तथा युवतियों शपथ ग्रहण करते हैं,। -" एक बार, रक्षाबंधन के दिन मनुबाई [लक्ष्मीबाई] ने क्रांतियोजना के अपने सहयोगियों और सहयोगिनियों को एक स्थान पर एकत्र करके उनसे कहा कि आज क्रांतियोजना की व्रतधारिणियाँ व्रतधारी बंधुओं को राखी बाँधकर उनसे यह आशा करती हैं कि वे क्रांति के कर्तव्य के प्रति अपने को दृढता से आबध्द समझेंगे। तात्या टोपे उन सब में अग्रज थे। इस अवसर पर तात्या के नेतृत्व में सब के द्वारा दृढ संकल्प की शपथ ग्रहण की गई। व्रतधारियों की भाँति व्रतधारिणियों ने भी दृढता की शपथ ग्रहण की।"[४८]

[७] देश के स्वर्णिम भविष्य ::

देश के स्वर्णिम भविष्य की कामना उपन्यास में दिखायी देती है। राष्ट्रीयता की भावना विकसित करनेवाले मिलिन्दजी भारतीय लोगों को वैभवशाली अतीत की याद दिलाते हुए स्वर्णिम भविष्य से परिचित करते हुए कहते हैं, - " भविष्य में भी भारत मे जनतंत्र की स्थापना हो सकती है। राजतंत्र भारत में पुन: स्थापित नहीं हो सकते। विदेशी अँग्रेजों के शासन का विकल्प भारत में जनतंत्र ही भविष्य में हो सकता है। बीच में भारत में राजतंत्र इतने शक्तिशाली हो गए थे कि उन्होंने जनतंत्र की संभावना को कठिन बना दिया था। अपने वैभव, विलिसिता और फूट ही के कारण भारत के राजा और नवाब सत्ताच्युत हो गए हैं। उन पर विदेशियों का नियंत्रण है। इस प्रकार वे भी जनता की भाँति ही पराधीन हो गए हैं और जनता का तथा उनका हित इसी में है कि वे और जनता मिलजुलकर विदेशी साम्राज्याकांक्षियों के शासन को भारत से समाप्त करें। यह अत्यंत आवश्यक है कि भूतकाल की भाँति ही भारत में पुन: जनतंत्र स्थापित हो और वह न्यायपूर्ण समृध्द और सशक्त हो।" ४९

मिलिन्द जी भारत के स्वर्णिम भविष्य के बारे में कहते हैं, - " एक दिन भारत विश्व का एक महत्वपूर्ण जनतंत्र बनकर रहेगा। किंतु, बीच में भारत को बहुत दुर्दिन देखने पड़ सकते हैं।"[५०]

उपन्यासकार ने केवल रंगीन स्वप्नों की सृष्टि न कर भूतकाल की भूलों की याद कर सुधार की ओर संकेत किया है। और आनेवाले संकटों का मुकाबला साहससे करने का आग्रह किया है।

[८] विदेशी शासन के प्रति विद्रोह की भावना तथा क्रांति की भावना ::

मानव राष्ट्र का निर्माता है। वह उसी का अभिन्न अंग है। राष्ट्र के निर्माण में सक्रिय योगदान देना उसका कर्तव्य है वह स्वयं था परोक्ष रूप से शासक है। समाज में मानव की राजनीतिक चेतना विकसित होती रही है। कभी- कभी वह अपने राष्ट्र की राजनीतिक परिस्थितियों से असन्तुष्ट हो जाता है। तो वह उन्हें बदलने का प्रयास करता हैं।

शासक अत्याचारी हो तो वह उसे उखाड़ फेंकने पर जी-जान की बाजी लगा देता है। हर मनुष्य अपने राज्य में अपना रक्षण चाहता है। अपने रक्षा के लिए ऐसे क्रूर शासकों के विरुद्ध वह आन्दोलन जगाता है, क्रान्ति करता है। डॉ. पुष्पा ठक्कर क्रान्ति के कारणों का उल्लेख करती हुई कहती है, " मानव -मन में विद्रोह की भावना उठती है और इसी के जरिए क्रान्ति का जन्म होता है।"[५१]

उपन्यासकार श्री जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द जी के साहित्य-जीवन का आरम्भ तब हुआ जब भारत परतन्त्र था। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के चंगुल में फँसा था। मिलिन्द जी स्वयं भी सन् १९२० से १९४७ ई. तक एक क्रान्तिकारी रह चुके हैं। इसका परिचय हम प्रथम अध्याय जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द : व्यक्तित्व एवं कृतित्व में दे चुके हैं। जिससे उपन्यासकार का दृष्टिकोन स्पष्ट होता है। उन्होंने १८५७ ई. स्वाधीनता संग्राम के नेता तात्या टोपे की कुशलता का परिचय देते हुए क्रान्तिकारियों के कार्य का परिचय इस प्रकार दिया है, - "गुप्तचरयोजना तथा छापामार युद्ध के विशेषज्ञ क्रांतिवीर तात्या टोपे ने देश भर में गुप्त चरवाहिनी का व्यापक जाल बिछा दिया। इसमें गायक, गायिकाएँ, उपदेशक, साधु, साध्वियाँ, पंडित, मौलवी आदि बडी संख्या में संमिलित होकर अपनी उत्कट देशभक्ति तथा स्वार्थत्याग का परिचय देने लगे तथा क्रांति का संदेश घर - घर में और -हृदय -हृदय में पहुचाने लगे। अपनी जान पर खेलकर भी वे लोग स्वराज्यक्रांति का विपुल प्रचार करने लगा।"[५२] साथ- साथ अनेक क्रांतिकारियों ने क्रांति की भावना को जनता में जागृत करने का प्रयास किया। " अवध के मौलवी अहमदुल्लाशाह गाँव-गाँव घुमकर विशाल जन सभाओं में अपने प्रेरक भाषण दे-देकर जनता को क्रांति के लिए उद्यत करने लगे।"[५३]

स्वराज्यक्रांति की भावना हवा की तरह फैल गयी। अनेक क्रांतिकारी अपने प्राणों की आहुति देने के लिए आगे बढ़े जिसका ज्वंलत उदाहरण उपन्यास में मिलता है, - "बारकपुर के क्रांतिनिष्ठ वीर सैनिक मंगल पांडे, अपनी देशभक्ति की उत्कट भावना के कारण, अँग्रेज अधिकारियों की वह अन्यायपूर्ण उद्धतता सहन नहीं कर सके, वह अपने हाथों में बंदूक और तलवार लेकर निकल पड़े और उन्होंने अँग्रेजों की

सेना के भारतीय सैनिकों का क्रांति के लिए प्रखर आवाहन किया। इस पर अँग्रेज अधिकारियों ने अपनी सेना के भारतीय सैनिकों को आदेश दिया कि वे मंगल पांडे को गिरफ्तार कर ले। किंतु, किसी भी सैनिक ने मंगल पांडे को गिरफ्तार नहीं किया। यह था तात्या टोपे, नाना साहब, अजीमुल्लाखाँ आदि के देशाभक्तिपूर्ण क्रांति आयोजन का प्रभाव।"[५४]

[६] बलिदान की भावना ::

मिलिन्दजी ने "क्रान्तिवीर तात्या टोपे" उपन्यास के द्वारा भारतीय लोगों में देशाभक्ति एवं बलिदान की भावना निर्माण करने के हेतु देश की आजादी के लिए लडनेवाले योध्दाओं[तात्या टोपे, लक्ष्मीबाई आदि] का चित्रण किया है। जिससे लेखक की क्रान्तिकारियों के प्रति होनेवाली श्रध्दा और कृतज्ञता प्रकट होती है।

क्रान्तिवीर तात्या टोपे विदेशी शासकों को देश से खदेड़ देना चाहते थे। इसके लिए आवश्यक मानसिकता उनके दिल-दिमाग में कूट-कूट कर भरी थी। वे कहते हैं,- "मुझे स्वाराज्य स्थापना की क्रांति में अपना सर्वस्व बलिदान करने के कार्य से कोई नहीं रोक सकता। मैं भी त्याग और बलिदान ही को सर्वोच्च पद समझता हूँ।"[५५]

तात्या टोपे के साथ- साथ झाँसी की राणी लक्ष्मीबाई का भी बलिदान गौरवपूर्ण है। जिसका गुणगान मिलिन्दजीने उपन्यास में किया है। अपने देश के प्रति कर्तव्यपालन को आवश्यक मानती हुई राणी लक्ष्मीबाई तात्या टोपे को समझाती हुई कहती है,- "तात्या उच्च व्यक्ति उसे नहीं समझा जाना चाहिए, जो परिस्थितियों के कारण उच्च पद पहुँच जाय, बल्कि उसे समझा जाना चाहिए, जो योग्यता, वीरता, साहस, धैर्य, त्याग और बलिदान में सबसे आगे रहकर, बिना कोई प्रतिफल पाए, क्रांति के कार्य में अपने जीवन और प्राणों का बलिदान करने को सदा उदयत रहा करें। तुम मुझे आशीर्वाद दो कि मैं इस दृष्टि से कुछ महत्व-पूर्ण कार्य कर सकूं। केवल पद का वास्तविक महत्व नहीं है। और सच पूछो, तो, तुम्हीने मुझे त्याग और बलिदान का मार्ग दिखाया है।"[५६]

उपन्यासकार क्रान्ति के नेताओं को महत्व देते हुए सरस्वती के मुंहसे कहते हैं,-"तात्या टोपे के बलिदान की सूचना मिलने पर भी मैंने अनुभव किया कि उनका बलिदान गर्व तथा गौरव का अनुभव करने के योग्य है। "५७

श्री मिलिन्दजी ने अपने उपन्यास "क्रान्तिवीर तात्या टोपे"में राष्ट्रप्रेम, क्रांति की प्रेरणा, देश के प्रति बलिदान, युग बोध एवं नवजागरण के विचारों को प्रस्तुत किया है, क्योंकि आज के जीवन में राष्ट्रीयता खतरे में पड़ी है। और नैतिक -हास की दर्दनाक कहानी सामने आ रही है। इसी लिए लेखक नयी पीढी के मन में दायित्व बोध जगाकर चेतना के स्वर भरना चाहते हैं।

[४] इतिहास प्रेम ::

उपन्यासकार मिलिंदजीने ऐतिहासिक कथावस्तु को अपनी रचना का आधार बनाया है, तात्या टोपे के उपेक्षित जीवन से पर्दा हटाया है। यह उनके इतिहास प्रेम का द्योतक है।

हिन्दी साहित्यकारोंने स्वतत्र संग्राम के क्रान्तिवीर तात्या टोपे के साथ न्याय नहीं किया जितना की झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के प्रति किया है। अनेक लेखकोंने जितने पन्ने रानी लक्ष्मीबाई पर लिखने में खर्च किये हैं, उतने पन्ने तात्या पर नहीं लिखे गये हैं। हो सकता है लेखकों ने तात्या को एक सर्वसाधारण वीर सेनापती के रूपमे देखा हो। और राणी लक्ष्मीबाई, झाँसी की राणी होने के नाते तथा नारी का त्याग, वीर, शौर्य के कारण अधिक महत्वपूर्ण रही हो।

किन्तु मिलिन्द जी ने सन् १८५७ ई. स्वतन्त्र संग्राम के वीर सेनापति तात्या टोपे पर उपन्यास लिखकर साहित्य में तात्या टोपे को अधिक महत्वपूर्ण स्थान देने का प्रयास किया है। उपन्यासकार ने ऐतिहासिक तथ्यों का निरूपण कर इतिहास प्रेम का सुन्दर परिचय दिया है। यद्यपि, प्रस्तुत उपन्यास में इतिहास के साथ- साथ कल्पना को भी पर्याप्त - अभिव्यक्ति मिली है, तथापि ऐतिहासिकता इसका मूलाधार है।

ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पना का सहारा लेना आवश्यक भी है, क्योंकि वह साहित्य का एक अंग है और साहित्य तथा इतिहास ग्रन्थ

में अन्तर होना स्वाभाविक है। फिर भी, ऐतिहासिक विषय को रचना का आधार बनाना इतिहास -प्रेम का द्योतक तो है ही। इस सत्य को झुठलाया नहीं जा सकता।

मिलिन्द जी इतिहास प्रेम को बताते हुए स्वामी ज्ञानदास जी के मुख से यह कहते हैं, - " वह कल्पना करते थे कि इतिहास चक्र का परिवर्तन भारत को किसी दिन जनतंत्र में परिणत करेगा। उनकी कल्पना का भावी भारत ऐसा था, जिसमें सर्वोच्य सत्ता जनता के हाथ में होगी। जनतंत्र की रक्षा वही जनता कर सकेगी जिसने जनतंत्र की स्वयं स्थापना की होगी।"[५८] इस प्रकार मिलिन्द जी का इस उपन्यास में इतिहास ज्ञान ऐतिहासिक तथ्यों के निरूपण में सहायक सिध्द हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास का सारा घटनाक्रम पूर्णत: ऐतिहासिक है। तात्या टोपे के जन्म से लेकर बलिदान तक की सारी घटनाएँ इतिहास सम्मत है।

[५] संस्कृति प्रेम ::

संस्कृति राष्ट्रीय गौरव की धरोहर है। राष्ट्र की महानता उसकी संस्कृति पर निर्भर करती है। अत: संस्कृति प्रेम राष्ट्रीयता का एक महत्वपूर्ण अंग है। संस्कृति राष्ट्रीय गौरव की धरोहर होने कारण संस्कृति को संभालकर रखना देश की जनता के हाथ में होता है। किन्तु, बीच में भारत को बहुत दुर्दिन देखने पड़ गये। भारत पर विदेशी सत्ता याने अँग्रेजों की सत्ता प्रस्थापित हो गयी थी। अँग्रेजों की ईस्ट इंडिया कंपनी ने धन और छल के आधार पर भारत पर अपना अधिकार जमा लिया था। इस कारण भारत की संस्कृति खतरे में पड़ी थी। इस खतरे का मुकाबला भारतीय लोगों ने किस प्रकार से किया इसका लेखा-जोखा प्रस्तुत उपन्यास है।

प्राचीन काल से भारत अपनी संस्कृति रक्षा करता आया हैं यह बताते हुए स्वामी ज्ञानदास जी विदेशी सत्ता को हटाने के लिए तथा जागृति के लिए बाजीराव प्राचीन राजाओं के शौर्य और श्रेष्ठत्व का परिचय देता हुआ कहते हैं कि, - " राम राज्य की प्रशंसा शास्त्रों ने क्यों की है ? इसलिए, कि राम ने शासनारूढ होने के पहले चौदह वर्षों तक वनवास की कठोर तपस्या की थी और तपस्या के उपरांत

सत्तारूढ होने पर भी निष्काम कर्मयोगी मर्यादा पुरूषोत्तम की भाँति लोकमंगल की आजीवन साधना की थी। अपने को सुख-सुविधा के जाल में फँसाकर जनता की एक क्षण के लिए भी उपेक्षा नहीं की थी। तभी शासक के रूप में वह विश्वविख्यात हुए थे। उनके चरित्र्य से तुम अपने जीवन को मिलाकर देखो ! क्या तुम इस दंड के पात्र नहीं हो, जो तुम्हें आज निर्वासन के रूप में मिल रहा है ?" [५९]

मिलिन्द जी के उपन्यास में भारतीय नारीकीवीरता, दया, ममता, त्याग और क्षमा की मूर्ति रही है। इंन्ही सात्विक गुणों के कारण वह वंदनीय रही है। नारी के इस गौरवमय रूप की प्रतीक है, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई । वीरांगना लक्ष्मीबाई ने भारत के सन १८५७-५८ ई. के स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण नेत्री का कर्तव्य- पालन करके इतिहास में अमर पद प्राप्त किया।"[६०] भारतीय संस्कृति में नारी के बलिदान की भावना लक्ष्मीबाई मे पूर्णत: विद्यमान है,- " झाँसी के युध्द में लड़ते- लड़ते प्राण बलिदान कर देने की अपनी जो इच्छा वह पूर्ण नहीं कर पाई थी, उस इच्छा की पूर्ति उन्होंने ग्वालियार में युध्द करते-करते वीरगति प्राप्त करके करली।"[६१]

[६] स्वतन्त्रता संघर्ष ::

देश को स्वतंत्रता आसानी से नहीं मिली है। इसके लिए नारी पुरूषों, बाल- वृध्दों ने अपने प्राणों की बलि दी है। सन १८५७ ई. के स्वतन्त्रता संघर्ष से देश के नेतागणों ने अँग्रेजों की दासता से मुक्ति प्राप्त करनेकेलिए निरन्तर संघर्ष किया और तभी सन १९४७ ई. में देश स्वतंत्र हुआ है।

स्वतंत्रता प्रिय तात्या ने स्वतन्त्रता संघर्ष में प्राणों का बलिदान किस प्रकार किया इसका उल्लेख करती हुई सरस्वतीबाई कहती है,- "तात्या का लक्ष्य एक प्रकार से पूर्ण हो चुका है। वह भारतीय जनता को स्वराज्य प्राप्त करने के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर चुके हैं। जो व्यक्ति अपने लक्ष्य के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर चुकता है, वह अपना लक्ष्य प्राप्त कर चुका होता है। लक्ष्य की उपलब्धि जितनी

बड़ी सफलता है, लक्ष्य के लिए प्राणों का बलिदान भी उतनी ही बड़ी सफलता है। तात्या पूर्ण सफल हो चुके हैं।[६२] "क्रान्तिवीर तात्या टोपे" उपन्यास में १८५७ ई. के स्वाधीनता संग्राम की कहानी मिलिन्दजी ने रोचक ढंग से प्रस्तुत कर राष्ट्रीयता का परिचय दिया है। उपन्यास का नायक स्वतंत्रता के लिए जीवन के अन्तिम साँस तक संघर्ष करता है।

[७] जातीय एकता और भौगोलिक एकता की भावना ::

हजारों वर्षों से इस देश में अनेक जातियाँ निवास करती रही हैं। देव, असुर आर्य, द्रविड़, हुण, मुसलमान, ईसाई, मंगोल आदि वंश के लोग आये और यहाँ पर स्थायी रूप से बस गये हैं। कई बार जातीयता के नाम पर संघर्ष हुआ, किन्तु अन्त में सभी ने मिलकर रहने का संकल्प व्यक्त किया। हिन्दू- मुस्लिम झगडे के कारण भारत- पाकिस्तान का बँटवारा हुआ। लेकिन फिर भी आज इस देश में हिन्दू, ईसाई, मुसलमान, पारसी एक साथ मिलकर रहते हैं।

हजारों वर्षों से जातीय एकता को बचाए रखने का प्रयास जारी रहा। सन १७५७ ई. को अँग्रेजोंने भारतपर अपना कब्जा कर लिया। तबसे अँग्रेजों के हाथों भारत गुलाम बन गया। इस गुलामी को नष्ट करने के लिए सन १८५७ ई. को भारत में रहनेवाले अनेक राजे, महाराजे, नवाब तथा बेगमों ने मिलकर अंग्रेजों के प्रति विद्रोह किया, जो आज भी भारत में जातीय एकता की मिसाल बन गया है। कभी- कभी साम्प्रदायिकता की विषाक्त भावना से प्रेरित एक दूसरे की हत्या करने का पागलपन करनेवाले लोग क्षणिक आवेग से मुक्त होकर मिल-जुलकर रहने का संकल्प करते हुए आज भी दिखाई देते हैं।

जातीय एकता की भावना का परिचय देते हुए मिलिन्द जी लिखते है,- "क्रमशः कई भूतपूर्व शासकों ने क्रांति में संमिलित होने के हेतु अपनी सहमति भेजी। दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह जफर तथा उनकी बेगम जीनत महल, अवध की बेगम हजरत महल, बिहार के क्रांतिकारी कुंवरसिंह आदि ने क्रांति में संमिलित होना स्वीकार किया।"[६३] सभी के सक्रिय प्रयास का परिणाम सन् १८५७ ई. के क्रान्ति के रूप में सामने आया।

प्रकृति ने भारत राष्ट्र को भौगोलिक रूप से विशिष्टता प्रदान की है। उत्तर में हिमालय, पश्चिम- दक्षिण में अरब-सागर, हिन्द महासागर तथा बंगाल की खाड़ी से परिसीमित है। यह नदियों का देश है, जिससे हरे- भरे मैदान धनधान्य से परिपूर्ण रहते हैं। जो सभी निवासियों में एकता का अहसास दिलाते हैं। इस प्रकार राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधे रखने में भौगोलिक एकता का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

सन १८५७ ई.का स्वतंत्रता संग्राम व्यापक था। पूरा देश इस संग्राम में कुद पड़ा। गुलामी से कोने -कोने की जनता त्रस्त हो गयी और सभी देश- भर के समस्त राजा और नवाबों ने एक होकर अँग्रेजों के प्रति विद्रोह करने की कसम खायी। इसका संकेत उपन्यास में मिलता है,- " सुविचारित योजना के अनुसार, देश-भर के ऐसे समस्त राजाओं और नवाबों की ओर क्रांति के संदेश भेजे गए, जो अँग्रेजों की ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन से, किसी न किसी कारण से असंतुष्ट थे। उन्हें सावधान किया गया कि फिरंगियों के आक्रमण तथा शासन से देश, उसकी स्वतंत्रता और संस्कृति इतने गंभीर संकट में पड़ गई है कि यदि वे क्रांति में संमिलित नहीं हुए, तो, देश का सर्वस्व नष्ट हो जायगा। ऐसे आमंत्रणों का क्रमशः प्रभाव बढ़ने लगा और अँग्रेजों के अन्यायों से बढ़ता जा रहा जनता का असंतोष क्रांति की भावना को भूतपूर्व भारतीय शासकों में भी बढाने में सहायक होने लगा। तात्या टोपे आदि की इस योजना ने कुछ ही समय में सफलता की ओर पदार्पण किया। " [६४]

इस प्रकार सन् १८५७ ई.की स्वतंत्रता संग्राम की कोई भौ-गोलिक सीमा नहीं थी। यह संग्रम व्यापक था, जिसमें हर जाति, धर्म की जनता समिलित थी।

[८] मानवतावाद ::

मानव ईश्वर की सुन्दरतम कृति है, भूतल का सबसे श्रेष्ठ, विकसित, संस्कृत और बौध्दिक प्राणी है। मानवतावाद ही सर्वश्रेष्ठ धर्म आज माना जाता है। मानवतावाद और गांधीवादी राष्ट्रीयता इन दोनोंकी

संकल्पना में कोई अंतर नहीं माना जाता। महात्मा गांधी एक ऐसे नेता थे जिन्होंने धर्म, देश- प्रेम, नैतिकता और राजनीति को परस्पर समन्वित करके एक नये जीवन-मूल्य का अविर्भाव किया था। इस जीवन मूल्य को मानवतावाद की संज्ञा दी जा सकती है।

यह मानव मात्र ही नहीं, प्राणी मात्र के सुख और कल्याण की कामना से ओत- प्रोत होता है। इसमें प्रेम, करूणा, अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह ब्रम्हचर्य आदि मानवीय गुणों के साथ-साथ सर्व धर्म समभाव साम्प्रदायिक सहिष्णुता की भावना भी सम्मिलित होती है। मानवतावाद अन्याय, अत्याचार और भ्रष्टाचार का विरोध करके सच्चे मानव राज्य अथवा स्वराज्य की स्थापना करना है। संसार में यह अन्याय, अत्याचार और भय तब तक बना रहेगा जब तक कि मानव जाति में समत्व बुध्दि नहीं होगी। सब को समान मानकर प्रेम का व्यवहार करने से ही मानवता का कल्याण हो सकेगा।

मानवतावाद के अन्तर्गत अज्ञात, अदृश्य, कल्पित जगत् को महत्व नहीं दिया जाता, अपितु इस लोक में मानव को सुखमय बनाना ही इसका आदर्श है।

मिलिन्द जी के उपन्यास "क्रान्तिवीर तात्या टोपे" में मानवतावाद का स्वर दिरवायी देता है। उपन्यास में मानवतावाद का उदाहरण मिलता है, सरस्वतीबाई अपने पति पेशवा बाजीराव द्वितीय से कहती है, - "दु:ख का अनुभव तभी होता है, जब कोई अपने को निर्बल, निरर्थक और एकाकी समझता है। देश-भर में नगर -नगर, ग्राम-ग्राम, गली-गली और घर-घर में जाकर दु:खी जनता से मिलने में मुझे अपने दु:ख का आणुमात्र भी अनुभव नहीं होगा। परिभ्रमण के परिश्रम से स्वास्थ्य सशक्त बनेगा। सादा भोजन आरोग्य प्रदान करेगा। भारत के घर घर में अभी इतनी दया बची हुई है कि किसी साध्वी को कोई भूखी नहीं सोने देगा। आत्मविश्वास का कवच आत्मरक्षा में भी सहायक होगा। जिसके मन मे भय नहीं होता, उसके शरीर को भी कोई क्षति नहीं पहुँचा सकता। साध्वी को मातृतुल्य समझना भारतीय संस्कृति की एक ऐसी विशेषता है, जिससे मुझे अपना लक्ष्य साधन में सहायता मिलेगी। मैं जनता की सेवा और सहायता करके

उसकी अंतरात्मा और -हृदय की वास्तविक सहानुभूति अर्जित करूँगी ।"[६५]

सन् १८५७ ई. का स्वतन्त्रता संग्राम देश के कोने-कोने में और व्यापक रूपसे हुआ है। यह संघर्ष व्यापक होने के कारण देश की जनता को धर्म, जात-पात का विचार न करके सिर्फ विदेशी शासन की गुलामी से मुक्ति पाना था। अंग्रेजों की सत्ता को मिटाने के लिए देश के राजा, महाराजा, बादशाह, नवाब, बेगमों आदि ने मानवीय भावनासे प्रेरित होकर इस संग्राम में भाग लिया।

सारांश ::

मिलिन्द जी राष्ट्रीय साहित्यकार हैं। जनता जनार्दन उनका इष्टदेव है। अत: उन्होने मानवीय आधार पर शोषण का विरोध, परतन्त्रता, विषमता और शोषण के विरुध्द संघर्ष का समर्थन किया है। उनकी दृष्टि में सब ईश्वर के पुत्र है। उन्होंने हिन्दू, मुसलमान ईसाई सभी को भ्रातृभाव से रहने की प्रेरणा दी है।

आलोच्य उपन्यास में राष्ट्रीयता की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। उपन्यास के नायक तात्या टोपे देश भक्ति त्याग एवं बलिदान की साक्षात प्रतिमा है। वे अतीत के बल- पौरुष के आदर्श द्वारा देशवासियों में प्राणों का संचार करना चाहते हैं। उन्होंने देशवासियों को दासता से छुटकारा पाने की प्रेरणा दी है। लेखक के अंतस्थल में स्वतन्त्रता की एक प्रबल उमंग व्याप्त थी। परिणाम स्वरूप वे स्वाधीनता आन्दोलनों में सक्रिय होकर कई बार जेल भी गये थे। राष्ट्रीयता का संदेश देकर उन्होंने भारतीय जनता को जगाने के लिए दुन्दुभि बजाई। उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों को नई दृष्टि से प्रकाशित कर भारतीय जनता को नवजागरण का संदेश दिया है। उन्होंने स्वर्णिम भविष्य को साकार करने का एक मात्र उपाय समता को माना है। वे ऐसी सभ्यता का विकास कर नई व्यवस्था का जन्म देखना चाहते हैं, जिसमें सारी मानवता दासता, दारिद्रता और अंध विश्वास से मुक्त होकर शांति एवं समता का अनुभव करें।

मिलिन्द की राष्ट्रीय भावना मानवता वाद के रूप में विकसित होकर नये मूल्यों की स्थापना करती है।

लेखक	ग्रंथ	पृष्ठ संख्या
१) मोतीलाल बनारसीदास	संस्कृत-इंग्लिश डिक्शानरी	८०२
२) जोशी प्रल्हाद नरहर	आदर्श मराठी शब्दकोश	१०३८
३) बाहरी हरदेव	शिक्षार्थी हिन्दी-अंग्रजी शब्दकोश	५४३
४) डी. एस. सी. सत्यप्रकाश	मानक अंग्रेजी हिन्दी कोश	८९८
५) क्लॉवर अॅण्ड क्लॉवर	ऑक्सफर्ड इंग्लिश डिक्शानरी	८०२
६) नेने गो. ब./जोशी श्रीपाद	बृहद मराठी-हिन्दी शब्दकोश	६०९
७) कुमार इश्वेश्वर	पायोनिअर २०शताब्दी डिक्शा-नरी इंग्लिश टू हिन्दी.	२११
८) पाठक रामचन्द्र	भार्गव आदर्श शब्दकोश	०५३
९) त्रिपाठी करूणापति	हिन्दी शब्दसागर	९८७
१०) जैन आदीशकुमार	नालन्दा विशाल शब्दसागर	११७७
११) चातक गोविन्द	आधूनिक हिन्दी शब्द कोश	४६२
१२) वर्मा रामचन्द्र	मानक हिन्दी कोश	~~११७७~~
१३) वर्मा रामचन्द्र	प्रामाणिक हिन्दी कोश	९६०
१४) बाहरी हरदेव	हिन्दी शब्द कोश	७००
१५) वसु नगेन्द्रनाथ	हिन्दी विश्व कोश	५०८
१६) बिस्ता कृष्णकुमार	साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिक चेतना	११७
१७) गुप्त विद्यानाथ	हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना	००१
१८) त्रिगुणायत गोविन्द	नवीन साहित्यिक निबन्ध	३११
१९) पाण्डेय जनार्दन	मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में भारतीय संस्कृति. की अभिव्यक्ति	०६०
२०) नारायण सुषमा	भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की हिन्दी साहित्य में अभिव्यक्ति	००१
२१) कलवडे सुधाकर शंकर	आधूनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना.	०१७
२२) कलवडे सुधाकर शंकर	आधूनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना	०२८

लेखक	ग्रंथ	पृष्ठ संख्या
२३) नारायण सुषमा	भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की हिन्दी साहित्य में अभिव्यकक्ति	००१
२४) त्रिगुणायन गोविन्द	नवीन साहित्यिक निबन्ध	३११
२५) बिस्सा कृष्णकुमार	साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिक चेतना.	११९
२६) पाण्डेय जनार्दन	मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति.	०५९
२७) गुप्त विश्वानाथ	हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना	००७
२८) गुप्त विश्वानाथ	हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना	००८
२९) कलवडे सुधाकर शंकर	आधुनिक हिन्दी कविता मे राष्ट्रीय भावना.	०१२
३०) मिश्र दुर्गा शंकर	साहित्यिक निबन्ध	४६९
३१) बिस्सा कृष्णकुमार	साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिक चेतना.	१२१
३२) मिश्र दुर्गाशंकर	साहित्यिक निबन्ध	४६९
३३) मिश्र दुर्गाशंकर	साहित्यिक निबन्ध	४७२
३४) मिश्र दुर्गाशंकर	साहित्यिक निबन्ध	४७२
३५) बिस्सा कृष्णकुमार	साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिक चेतना.	१२३
३६) शर्मा बीना -जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द	व्यक्तित्व एवं कृतित्व	३२०
३७) मिलिन्द जगन्नाथप्रसाद	क्रांन्तिवीर तात्या टोपे	००७
३८) वही	वही	०३९
३९) वही	वही	०३१
४०) वही	वही	००७
४१) वही	वही	०३०
४२) वही	वही	०१०
४३) वही	वही	००७
४४) वही (भूमिका)	सही	००३

लेखक	ग्रंथ	पृष्ठ संख्या
४५) वही	वही	०८९
४६) वही	वही	०१२
४७) वही	वही	०३३
४८) वही	वही	०२४
४९) वही	वही	०४५
५०) वही	वही	००७
५१) ठक्कर पुष्पा -दिनकर	काव्य में युग चेतना	०८८
५२) श्री जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द	क्रांतिवीर तात्या टोपे	०३६
५३) वही	वही	०३६
५४) वही	वही	०३९
५५) वही	वही	०३५
५६) वही	वही	०३४
५७) वही	वही	०८४
५८) वही	वही	०९३
५९) वही	वही	०१०
६०) वही भूमिका	वही	००३
६१) वही	वही	०६५
६२) वही	वही	०८९
६३) वही	वही	०३६
६४) वही	वही	०३५
६५) वही	वही	०१८